विषय सूची

जमीन का बंटवारा

[जमीन बंटवारा अथवा भूमिदान यज्ञ की चर्चा होते ही लोग पूछ बैठते हैं—जमीन कहाँ है ? क्या बंटवारा से पैदावार का स्तर नहीं गिरेगा ? इनका उत्तर इस लेख में ग्रन्थमाला-सम्पादक ने देने का प्रयत्न किया है ।]

जमीन का बंटवारा एशियाई देशों के किसानों के लिये इस समय सब से प्रमुख प्रश्न है। एशिया-वासियों के दबे हुए जन स्रोत प्राप्त हों, ऐसी ही कोई बड़ी चीज दिला सकती है और उन्हें नव-समाज निर्माण की ओर आगे बढ़ा सकती है। न्याय, मानवता और जग की पैदावार, सब की मांग है कि—एशिया ही क्यों, सारे विश्व में—धरती का उपयोग भी साधारण मानवों के लिये प्रकाश और हवा की तरह सहज हो जाय।

जमीन का बँटवारा, सहयोगी खेती और सहायक उद्योग ही भारतीय गाँवों की सूखी हड्डियों में नवीन प्राण का संचार कर सकते हैं। सहयोगी खेती की पृष्ठ भूमि में जमीन का बटवारा, पूरे समाज के—कानूनी, आर्थिक और सांस्कृतिक—ढांचे को बदल देता है। फिर समाज के लिये समाजवाद का आधार छोड़ कर चलना असम्भव हो जायगा। इसलिये इसे हर पहलू से समझना आवश्यक है। सब से पहले हम किसानों में निम्नतम-जीवन-स्तर के निर्धारण का ही प्रश्न ले लें।

निम्नतम-जीवन स्तर का निर्धारण करना उद्योग और कृषि दोनों में कठिन है: फिर भी जैसे हो, इसे करना ही पड़ेगा। यह खुशी की बात है कि कारखाने के मजदूरों के लिये इसे सिद्धान्त रूप में मोटे तौर पर स्वीकार कर लिया गया है और भारत सरकार खेतिहर मजदूरों में भी इसे लागू करना चाहती है। अफसोस है कि किसानों के विशाल समुदाय के लिये यह प्रश्न सोचा भी नहीं जा रहा है।

जब हिन्द किसान पंचायत ने यह घोषणा की कि औसत पैदावार के १२ एकड़ से कम की जोत किसी किसान परिवार के पास न रहे तो चारों तरफ से तरह तरह के लोगों ने विरोध करना शुरू किया। किसी ने मजाक उड़ाया, किसी ने गालियाँ दी। लोग पूछने लगे, जमीन कहाँ है?

इस प्रश्न को समझने का प्रयत्न यदि आलोचक करते तो ऐसे सवाल न उठते। जब हिन्द मजदूर सभा ने एलान किया कि किसी मजदूर को १०० रुपये से कम महीना न मिले, तो इसका विरोध या इसपर व्यंग नहीं हुआ। कोई भी अर्थशास्त्री यह साबित कर सकता है

कि देश का व्यवसाय १०० रुपये महीने की निम्नतम मजदूरी नहीं दे सकता है। परन्तु कोई भी मजदूर-यूनियन जवाब देगा कि मजदूर आज १०० रुपये से कम महीने में जिन्दा नहीं रह सकता और उसका यह जवाब पूरे तौर पर सही जवाब होगा। यदि उद्योग के पास श्रम जीवियों को जीवन निर्वाह के योग्य मजदूरी देने की शक्ति नहीं है, तो यह शक्ति उसे पैदा करनी होगी। जैसे एक मजदूर - यूनियन जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी की मांग को छोड़ नहीं सकती, उसी तरह किसान संस्था भी आर्थिक जोत की मांग को छोड़ नहीं सकती। यह मांग गोल मोल शब्दों में भी नहीं रखी जा सकती। सिर्फ यह कहना कि आर्थिक जोत कायम हो, इसके भाव को स्पष्ट नहीं करता। जैसे, यदि मजदूर-यूनियन १०० रुपये महीने की मांग करने के बदले सिर्फ इतना ही कहे कि जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी कायम हो, तो एक साधारण कार्यकर्ता की नजर में इस मांग का सारा जोर खत्म हो जाता है। इसी तरह एक साधारण किसान के लिये १२ एकड़ प्रति परिवार या २० बीघा प्रति परिवार की मांग में जो एक प्रेरक शक्ति है, वह केवल आर्थिक जोत कहने से नहीं पूरी होती है।

यह सही है कि धरती पर आज बोझ इतना ज्यादा हो गया है कि प्रत्येक किसान - कुटुम्ब को तुरत १२ एकड़ देना सम्भव नहीं होगा। फिर भी इसे पूरा करना हमारी जिम्मेवारी है और यह सम्भव भी है। आंकड़ों के महाजाल में घुसना खतरा मोल लेना है। क्यों कि, भारत सरकार के पास भी आज सही आंकड़े नहीं है। फिर भी काम चलाने लायक एक मोटा अन्दाज हम लगा सकते हैं। १९४१ की मतगणना के अनुसार भारतीय प्रजातन्त्र का क्षेत्रफल और आबादी इस प्रकार है :—

आबादी और क्षेत्रफल

भारतीय प्रजातंत्र

राज्य	क्षेत्र १९४१ में वर्गमील	आबादी १९४१ में
आसाम	५०,२९६	७,४७१,५३१
बिहार	६९,४७५	३८,३४०,१५१
बम्बई	७६,४४३	२०,८४९,८४०
मध्यप्रदेश और बरार	९८,५७५	१६,८१३,५८४
पूर्वी पंजाब	३७,०५८	१२,६१७,१७४
मद्रास	१,२६,१६६	४९,३४१,८१०
उड़ीसा	३२,१९८	८,७२८,५४४
संयुक्त प्रान्त	१,०६,२४७	५५,०२०,६१६
पश्चिमी बंगाल	२८,०३३	२१,३१८,३९१
राज्यों का जोड़	६,२४,७६४	२२८,५०,१६२
अजमेर	२,४००	५८३,६९३
अंडमन और निकोबार	३,१४३	३३,७६८
कुर्ग	१,५९३	१६८,७२६
दिल्ली	५७४	९१७,९३९

राज्य	क्षेत्र १९४१ में (वर्गमील)	आबादी १९४१ में
पन्थपिपलोदा	२५	५,२६७
केन्द्र के अधीनस्थ क्षेत्रों का जोड़	७.७३५	१,७०९,३९३
राज्यों और केन्द्र अधीनस्थ क्षेत्रों का जोड़	६३२, ४९९	२३०,२११,०३५
आसाम स्टेट	२,४०८	७,२५,६०५
बड़ोदा	८,१७३	२,८५५,०१०
बगाल स्टेट	९,४०४	२,१४४,८२९
मध्यभारत स्टेट	५२,०७२	७,५११,६१४
छत्तीस गढ़	३७,६८८	४,०५०,०००
कोचीन	१,४९३	१,४२२,८७५
दक्षिण और कोल्हापुर	१०,८७०	२,७८४,४२८
पूर्वी पंजाब स्टेट	२६,०३८	४,९४७,२०२
गुजरात	७,३५२	१,४५८,७०२
ग्वालियर	२६,३६७	४,००६,१५९
हैदराबाद	८२,३१३	१६,३३८,५३४
काश्मीर	८२,२५८	४,०२१,६१६
मद्रास स्टेट	१,६०२	४६८,७५४

राज्य	क्षेत्र १९४१ में (वर्ग मील)	आबादी १९४१ में
मैसूर	२९,४५८	७,३२९,१४०
उड़ीसा स्टेट	१८,१५१	३,०२३,७३१
राजस्थान	१३२,५५९	१३,६८०,२०८
सिक्कम	२,७४१	१२१,५२०
ट्रावंकोर	७,६६२	६,०७०,०१८
यू० पी० स्टेट	१,७६०	६६८,४७०
पश्चिमी भारत स्टेट	३७,८९४	४,६०४,१५६
राज्यों का जोड़	५८८,२७०	८८,८१३,७०१
भारतीय प्रजातंत्र का जोड़	१,२२०,७६१	३१९,०२४,७३६

(भारतीय सरकार द्वारा प्रकाशित 'इन्डियन फुड स्टेटिसटिक्स' से)

इसके बाद के आकड़ों से पूरा क्षेत्रफल ८० करोड़ एकड़ से कुछ ऊपर आता है।

१९५१ के बाद से हुई आबादी की वृद्धि को लेकर इस समय हम यह कह सकते हैं कि भारतीय प्रजातन्त्र में मोटे तौर पर ३६ करोड़ व्यक्तियों की आबादी है और ८० करोड़ एकड़ कुल जमीन का रकबा है। आकड़ों के क्षेत्र में इसके बाद का कदम हमें उलझन में डाल देता है। उपर्युक्त जमीन के पूरे रकबे के वर्गीकरण का आज कोई भी साधन हमारे पास नहीं है। एफ० ए० ओ० के द्वारा प्रकाशित आकड़ों के अनुसार भारत में कुल जमीन के ३७.९ प्रतिशत जमीन में खेती होती है। इस आधार पर लगभग ३० करोड़ एकड़ जमीन में खेती

होनी चाहिए, परन्तु भारत सरकार के १९४८-४९ के आंकड़ों के अनुसार कुल आबाद जमीन का रकबा २२ करोड़ एकड़ से ज्यादा नहीं है। बहुत क्षेत्र ऐसे हैं, जिनके आंकड़े भारत सरकार के पास नहीं हैं। फिर भी यह ८ करोड़ एकड़ का अन्तर बहुत बड़ा अन्तर है। छान बीन करने से ऐसा मालूम होता है कि भारत के पुराने आंकड़ों में ऐसे बहुत बड़े क्षेत्र का रकबा छोड़ दिया जाता था, जिनका सर्वे नहीं हुआ था। पूरे क्षेत्र-फल को लें, तो भारत सरकार के आंकड़ों के अनुसार इस समय केवल २७ प्रतिशत जमीन आबादी में है। इस अवस्था में किस तरह जमीनों का वर्गीकरण किया जाय? भारतीय प्रजातन्त्र में जो राज्यों के हिस्से शामिल हैं, उनका वर्गीकरण निम्नप्रकार है :—

विशेष	क्षेत्रफल एकड़ में करोड़, लाख	अनुपात %
गाँव के कागजों के अनुसार पूरा क्षेत्र—	४०,२०	१००
जंगल	६२०	१५.४
खेती के अयोग्य	६४०	१६.०
खेती योग्य परन्तु परती	६८०	१७.०
मौसमी परती	३५०	८.६
आबाद रकबा	१७३०	४३
	४०२०	१००

इस तरह का कोई वर्गीकरण भारत के पूरे क्षेत्रफल याने ८०

करोड़ एकड़ के लिये नहीं मिलता। उपर्युक्त प्रान्तों के वर्गीकरण में जो अनुपात दिये हुये हैं, उनके आधार पर यदि ८० करोड़ एकड़ का वर्गीकरण हम करें तो असम्भव आकड़ें हमें मिलेगें। उसके अलावे यह भी निर्विवाद है कि बिना सर्वे के रकवा का काफी बड़ा हिस्सा गैर-आबाद जमीन का है। इसलिये यही सम्भव है कि हम पूरे रकवे के अनुपात का एक अन्दाजा लगावें और फिर उसके अनुसार जमीन का वर्गीकरण करें। मेरी राय में निम्नलिखित वर्गीकरण वस्तुस्थिति से बहुत दूर नहीं होगा।

विशेष	प्रान्तों के अनुपात%	पूरे रकबे का अनुमानित अनुपात%	क्षेत्र करोड़ एकड़ में
जंगल	१५.४	१२.५	१०
खेती के अयोग्य	१६.०	२५	२०
खेती के योग्य परन्तु परती	१७.०	१८.७५	१५
मौसमी परती	८.६	१२.५	१०
आबाद रकबा	४३.०	३१.२५	२५
जोड़	१००	१००	८०

इस गणना के अनुसार प्रति व्यक्ति ०.७ एकड़ आबाद जमीन आती है।

अब हमें यह समझना है कि खेती पर कितने लोग आश्रित हैं। सभी अर्थशास्त्रियों ने यह माना है कि आज कोई ७२ प्रतिशत व्यक्ति खेती पर जीते हैं। इसके अनुसार २६ करोड़ की जनसंख्या खेती पर आश्रित है। इनका भी वर्गीकरण अनुमान के आधार पर ही सम्भव

है। १९३१ की मत गणना के समय पेशा के आंकड़े निकालने का प्रयत्न किया गया था। वह निम्न प्रकार है :—

१. जमीन नहीं जोतने वाले जमीन के मालिक	२.३
२. जोतने वाले मालिक	१७.४
३. जोतने वाले रैयत	२२.१
४. खेतिहर मजदूर	२०.१
५. अन्य	४.५
	६६.४

१९३१ के बाद से जमीन कुछ लोगों के पास इकट्ठी हुई है। इसे ख्याल में रख कर हम एक अनुमानित अनुपात के आधार पर नीचे लिखा वर्गीकरण कर सकते हैं :—

अनुपात १९३१ की मत गणना के अनुसार		अनुमानित अनुपात इस समय	अनुमानित अनुपात के अनुसार संख्या, करोड़ में
नहीं जोतने वाले मालिक	२.३	५	१.८०
जोतने वाले मालिक	१७.४	१६	५.७५
बटाईदार वगैरह	२२.१	२५	९.००
खेतिहर मजदूर	२०.१	२२	८.०१
अन्य	४.५	४	१.४५
कुल जोड़ :—	६६.४	७२	२६ करोड़

(संख्या और अनुपात में सुविधा के लिये अंकों के बहुत छोटे टुकड़े निकाल दिये गये हैं।)

जोतने वाले किसान और रैयतों की सम्मिलित संख्या इसके अनुसार १४७५ लाख की है। यही संख्या हम भारत के किसानों की संख्या मान सकते हैं। यदि हम ६ व्यक्तियों का औसत भारत-परिवार मानें, जैसा कि १९२१ की मत गणना से पता चला था, तो हमें दो करोड़ छयालिस लाख किसान परिवारों की संख्या मिलेगी। इसमें से प्रत्येक परिवार को यदि १२ एकड़ जमीन देनी हो, तो हमे लगभग २९ करोड़ ५० लाख एकड़ जमीन चाहिये। जैसा कि ऊपर बताया गया है, २४ करोड़ एकड़ जमीन में आज खेती होती है और यदि आबादी में आई हुई मौसमी परती को भी जोड़ लिया जाय, तो यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि इस समय लगभग ३५ करोड़ एकड़ जमीन आबादी में है। इनके अलावे १५ करोड़ एकड़ जमीन ऐसी हैं, जो आबादी में लाई जा सकती है। इन आंकड़ों पर ध्यान देने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि २ करोड़ ४६ लाख किसान परिवार को ही १२ एकड़ की जोत देनी पड़े, तो कोई कठिनाई नहीं होगी। दरअसल यह बंटवारा नई जमीन आबादी में लाये बिना ही सम्भव है।

कठिनाई तब पैदा होती है, जब हम खेतिहर मजदूरों को भी इसमें शामिल करते हैं। और उनका शामिल करना न्यायोचित है। इसके अलावा समाजवादी-कृषि-अर्थ-व्यवस्था में किसान और मजदूर के बीच कोई अन्तर नहीं रह जाता। सहयोगी फार्मों के लिये काम करने वालों का एक ही वर्ग गांव में बच रहता है। परन्तु यहाँ यह भी याद रखना चाहिए कि जब तक जतियां अलग अलग बनी रहेंगी खेतिहर मजदूरों की आवश्यकता भी बनी रहेगी। यदि उनकी संख्या भी हम जोड़ दें, तो कुल परिवारों की संख्या ३ करोड़ अस्सी लाख हो जाती है। इनमें से प्रत्येक को यदि निम्नतम निर्वाह योग्य जोत देनी पड़े, तो ४५ करोड़ ६० लाख एकड़ जमीन की हमें जरूरत पड़ेगी।

हमारे पास खेती के लायक कुल जमीन ५० करोड़ के लगभग इस तरह है :—

१.	गैर आबाद खेती के लायक	१५ करोड़ एकड़
२.	आबादी में आई हुई मौसमी परती	१० ,, ,,
३.	आबाद	२५ ,, ,,
		५० करोड़ एकड़

इस दृष्टि से खेतिहर मजदूरों को भी लेकर प्रत्येक किसान परिवार के लिये १२ एकड़ की जोत का होना ऐसा कठिन नहीं, जैसा लोग आम तौर पर समझते हैं। फिर भी यह हमें याद रखना चाहिये कि हम ने ऊपर की सीमा ३० एकड़ की रक्खी है। बहुत से लोग २० एकड़, २५ एकड़ या ३० एकड़ वाले भी होंगे। इसके अलावे सभी उपलब्ध खेती लायक जमीनें तुरत आबादी में नहीं लायी जा सकती हैं। इसलिये यदि सभी परिवारों को शीघ्र निम्नतम जीविका योग्य जोत देनी हो तो खेती के व्यवसाय से किसानों के एक बड़े हिस्से को अन्य उपयोगी व्यवसायों में लगाना होगा।

यहाँ मैं एक और बात की सफाई कर दूं। बहुत से लोग हमारे प्रस्ताव को बिना समझे कह बैठते हैं कि कहीं १२ एकड़ में १० मन बाजड़ा होगा, तो कहीं १२ एकड़ में २०० मन धान। इसलिये १२ एकड़ कहने का क्या अर्थ ? लोग भूल जाते हैं कि हम ने औसत पैदावार का १२ एकड़ कहा है। यह स्पष्ट है कि एक किसान का असली मतलब पैदावार से है, न कि जमीन से। इसलिये जमीन के रकबे का ताल्लुक पैदावार से रहना चाहिये। निम्नतम आर्थिक जोत तंजोर जिला में चार एकड़ हो सकती है और बीकानेर में ३० एकड़।

औद्योगिक क्षेत्रों में भी यह याद रखना चाहिये कि १०० रुपये मासिक मजदूरी का सम्बन्ध रुपये की क्रय-शक्ति से है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में अपने-अपने क्षेत्रों के लिये अलग-अलग निम्नतम और उच्चतम जोत की सीमा निर्धारित करनी होगी।

अब हमें यह भी समझ लेना चाहिये कि आर्थिक जोत किन सिद्धान्तों पर निश्चित की जाय और हिन्द किसान पंचायत ने किन कारणों से निम्नतम जीविका योग्य जोत के लिये १२ एकड़ का स्तर माना है। प्रो० दांतवाला ने आर्थिक जोत निर्धारण के लिये जो निम्नलिखित दो सिद्धान्त बताये हैं, उन्हें हमें स्वीकार करने में कोई हिचक नहीं :—

१. ऐसी जोत, जो किसान परिवार का भरण पोषण कर सके।
२. ऐसी जोत, जो किसान परिवार और कम से कम एक जोड़ी बैल को काम दे सके।

कोई भी अनुभवी व्यक्ति यह बता सकेगा कि औसत पैदावार की १२ एकड़ जमीन में हम एक किसान परिवार और कम से कम एक जोड़ा बैल को काम में लगाये रह सकते हैं। अब प्रश्न उठता है औसत पैदावार की १२ एकड़ जमीन से किसान को कितना मिलेगा।

१/३ टन प्रति एकड़ यदि हम आदर्श पैदावार मानें, जो १९४८-४९ की पैदावार के आंकड़े से थोड़ा ज्यादा है, तो १२ एकड़ जमीन में लगभग ४ टन अनाज की पैदावार होगी। पैदावार का खर्च मालगुजारी लेकर पूरी पैदावार का ६० प्रतिशत के लगभग होता है। यहां यह याद रखें कि इसमें काम करने वाले किसान परिवार की मजदूरी शामिल नहीं है। यदि अनाज की औसत कीमत १५ रुपये मन

मानी जाय, तो १२ एकड़ जमीन की कुल पैदावार की कीमत १६०० रुपये होगी। याने खेती का खर्च काटकर किसान के पास ६४० रुपये प्रतिवर्ष बचेंगे। इसका अर्थ हुआ कि औसत पैदावार की १२ एकड़ की जोत से एक किसान परिवार को लगभग ५० रुपये महीने मिलेंगे। मैं नहीं समझता, इससे कम में कोई परिवार किस तरह जिन्दा रह सकता है। अभी भारत सरकार ने बिहार राज्य में खेतिहर मजदूरों की अवस्था की जाँच कराई है। इस जाँच से पता चला है कि खेतिहर मजदूर परिवारों के जीवन निर्वाह का औसत खर्च ६१६ रुपए साल है। अन्तर्राष्ट्रिय अन्न और कृषि संस्था (एफ० ए० ओ०) के विशेषज्ञों के अनुसार केवल जीवन निर्वाह योग्य भोजन देने के लिये प्रति व्यक्ति दो एकड़ जमीन में खेती का होना आवश्यक है। याद रहे, १२ एकड़ जोत का बंटवारा प्रति व्यक्ति दो एकड़ से कम ही जमीन देता है। हाँ, खेती पर आश्रित जनसंख्या पर प्रति व्यक्ति दो एकड़ हो जाते हैं। १२ एकड़ की जोत एक किसान परिवार को किसी तरह जिन्दा रख सकेगी। इसलिये इस प्रश्न का सम्बन्ध मानवता से है। १२ एकड़ की माँग आँकड़ों या आर्थिक शक्ति की बहस के ऊपर है। यह माँग किसानों को जीवित रखने की माँग है।

याद रहे, १२ एकड़ में एक फसला साधारण पैदा हो, तो यह केवल ५० रुपये महीने का ही स्तर देता है। पैदावार बढ़ाई जाय, दो फसलें हों, कुछ हिस्से में गन्ना या कपास की तरह कीमती फसल हों, तो १२ एकड़ से १०० रुपये महीने का स्तर भी प्राप्त किया जा सकता है। इस तरह हिन्दुस्तान के किसान और मजदूर १०० रुपये महीने के स्तर पर पहुँच सकते हैं। फिर भी यह स्पष्ट है कि इसे पूरा करने में समय लगेगा और बड़े पैमाने पर साधन जुटाने होंगे। एक ओर तो तीव्रगति से आबादी बढ़ी है और दूसरी ओर, पिछले १०० वर्षों में सहायक

उद्योगों का नाश हुआ है; इसके परिणाम स्वरूप धरती पर भयंकर बभ्क हो गया है। इस बुनियादी बात को हमें बराबर याद रखनी चाहिये कि हर उद्योग के लिये, व्यक्तियों को काम दे सकने की एक सीमा है। जैसे औसत चीनी मिल चालू मौसम में ६०० से १००० तक मजदूरों को रोजी दे सकती हैं। यदि ज्यादा मजदूर उस मिल के ऊपर लद जायें, तो उन्हें भी भूखों रहना पड़ेगा और कारखाने पर भी मुसीबत आयगी। ऐसे ही संकट में भारत का कृषि उद्योग आज पड़ा हुआ है। खेती से बड़ी तादाद में लोगों को हटाकर दूसरे कामों में लगाना होगा।

जमीन के बंटवारे की मांग को निम्नलिखित पांच अन्य मांगों के साथ समझने का प्रयत्न करना चाहिये :—

(क) नयी जमीन को आबादी में लाना। (ख) खेती पर जीने वालों के एक हिस्से को अन्य उद्योग धन्धों में लगाना। (ग) आबादी की वृद्धि को रोकना। (घ) घनी आबादी वाले हिस्सों से लोगों को हटाकर देश में ही कम आबादी वाले हिस्सों में बसाना। (च) अन्य देशों में भारतीयों को बसाना।

जमीन का पुनर्वितरण, पैदावार और सामाजिक - न्याय दोनों दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है। एक दो बीघे जोत में किसानों के उलझे रहने से किसी को भी लाभ नहीं। इससे पैदावार की वृद्धि में रुकावट पैदा होती है और सामाजिक न्याय भी कायम नहीं रखा जा सकता, इसलिए तुरत ३० एकड़ के ऊपर की सभी खेती धीरे धीरे सहयोगी प्रथा पर ले आनी चाहिये। इस तरह जमीन का पुनर्वितरण चीन, मैक्सिको, बलगेरिया, पोलैन्ड तथा अन्य देशों में चल रहा है। काश्मीर और बर्मा में भी यह प्रारम्भ हो गया है।

भारत की अन्न समस्या, जो रोज रोज गम्भीर होती जा रही है और जिसे सुलझाये बिना औद्योगिक प्रगति भी सम्भव नहीं, नयी

जमीनों को आबादी में लाये बिना हल नहीं हो सकती। आवश्यकता ने अन्य देशों को भी ज्यादा जमीन खेती में लाने के लिये मजबूर किया है। नीचे उन प्रमुख देशों का नाम और पूरे क्षेत्रफल की प्रतिशत आबादी का अंक दिया जा रहा है, जिन्हें ऐसा करना पड़ रहा है :—

जर्मनी ४२%
फ्रान्स ३६%
पोलैन्ड ४९%
स्पेन ३५%
इटली ४८%
भारत ३०%

युद्ध काल में ब्रिटेन को भी भूमि सेना द्वारा सभी परती जमीनों को आबादी में लाना पड़ा था। करीब ४० लाख एकड़ नई जमीन वे इस तरह आबाद कर सके थे। गल्ले की कमी भारत को डालर और पाउण्ड क्षेत्र से खाद्यान्न आयात करने को मजबूर करती है। जिससे हमारा अन्तर्राष्ट्रिय आर्थिक श्रोत सूख जाता है और हम औद्योगिक विकास के लिये मशीन तथा अन्य आवश्यक सामान नहीं मंगा सकते।

"बड़ी तादाद में नई जमीनों को आबादी में लाने का खर्च और पूंजी की आवश्यकता बहुत बड़ी मालूम पड़ती है। बहुत से व्यक्ति इस भार को उठा सकना असम्भव मान सकते हैं, क्योंकि न तो हमारे पास ट्रैक्टर, बुलडोजर वगैरह हैं, न हम उन्हें बाहर से ज्यादा तादाद में मंगा सकते हैं और न उन्हें बनाने का साधन ही हमारे पास है। इसलिये लेबिर पलटन को जो भी साधन मिले उसीका सहारा लेना होगा। कारखाने जैसा भी औजार बना सकें उन्हें बनाकर किसानों को देना चाहिये। यह हमें कहने की आवश्यकता नहीं कि लोहे के कारखानों के सामने पहली जिम्मेदारी खेती के औजारों

को तैयार करना होना चाहिये और उनमें अनवरत सुधार भी होते रहना चाहिये।"

"भारत के करोड़ों भूखों को खिलाने का अन्य कोई साधन नहीं। खेतीहर पलटन बड़े पैमाने पर काम करें तो वर्ष दो वर्ष में भारत स्वावलम्बी बन सकता है। दूसरे बेरोजगारी जो बढ़ती जा रही है वह भी काबू में आयेगी। गाव और शहर के रहने वाले बहुत से बेरोजी व्यक्ति खेतीहर पलटन में भर्ती हो सकेंगे। निःसंदेह १० करोड़ एकड़ जमीन को हल के नीचे लाने से न तो जंगल का रकबा घटेगा और न कोई अन्य बाधा पैदा होगी। ये जमीन बड़े बड़े चकों में आबादी से दूर पड़ी हैं। उन्हें खेती में लाना व्यक्तिगत पूंजी के लिये सम्भव नहीं।"

(श्री राम मनोहर लोहिया के रीवां व्याख्यान से)

इन सब दलीलों को स्वीकार कर भी एक व्यवस्था विशेषज्ञ अपना सर हिलाकर कहेगा "यह सब ठीक है, पर यह तो बताओ कि खर्च कितना पड़ेगा?" इसका उत्तर देने के लिये फिर हमें अनुमान के क्षेत्र में उतरना होगा, परन्तु हमारे आलोचक आँकड़ा के बिना सुनने को तैयार नहीं, इसलिये मैं केवल उनके सन्तोष के लिये आर्थिक भार का अन्दाजा दे रहा हूँ। याद रहे यदि केवल किसान कुटुम्बों को आर्थिक जोत देनी पड़े, तो खर्च का बोझ राष्ट्र पर नहीं पड़ेगा।

यदि एक एकड़ नयी जमीन को आबादी में लाने का खर्च १०० रु० रखा जाय, तो १० करोड़ जमीन को आबाद करने का खर्च लगभग १००० करोड़ रुपय होगा। यहां अन्य कई बातें भी याद रखनी चाहिये। एक इन्हें आबाद करने वाले मजदूर मात्र नहीं होंगे, वे सहयोग

फार्म द्वारा जमीन के 'मालिक बनेंगे। इसलिये इन्हें आबाद करने में उनका व्यक्तिगत स्वार्थ होगा। दूसरे, खर्च को ५ या १० वर्ष में फैलाया जा सकता है, बीच में आबाद जमीनों से फसल हमें मिलने लगेगी।

इसका भी अन्दाजा लगावें कि इन जमीनों को आबाद करने से हमें मिलेगा क्या? सरकारी आंकड़ों के अनुसार खाद्यान्न और व्यवसायिक फसलों की कीमत क्रमशः ४०० रु० और १६०० रु० औसत प्रतिटन है। यदि हम १ मन प्रति एकड़ खाद्यान्न की और २७ मन प्रति एकड़ व्यवसायिक फसल की पैदावार मानें तो १० करोड़ एकड़ से हमें ४ करोड़ टन की पैदावार, मिलनी चाहिये। औसत दाम यदि ८०० रु० प्रति टन माना जाय, तो १० करोड़ एकड़ से हमें ३२०० करोड़ रुपये मिलने चाहिये। यदि इस लक्ष्य का पूरा न सही, बड़ा हिस्सा ही हम पूरा कर सकें तो खाद्य संकट कम होने के साथ, देश तीव्र वेग से औद्योगिक विकास की ओर आगे बढ़ेगा। इसलिये खेतिहर पल्टन का इतना महत्त्व है।

याद रहे कि पानी आदि की सुविधा की दृष्टि से ये भी नई जमीनें बुरी नहीं हैं। जैसे तेलंगना (हैदराबाद) में औसत वर्षा ३३ इन्च प्रतिवर्ष की होती है और आदिलाबाद (हैदराबाद) में तो यह ५० इन्च तक चली जाती है। इसी तरह मध्य भारत के झाबुआ जिले में आबोहवा भी अच्छी है और वर्षा भी ३० इन्च तक होती है। यह भी सही नहीं है कि इन जमीनों की उर्वरा शक्ति कमजोर है। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश में इन जमीनों को आबाद कर पता चला है कि इनकी पैदावार काफी अच्छी है।

यह भी याद रखना है कि हमने कहीं जंगल काटने का प्रस्ताव

नहीं किया है। बहुत सी नयी जमीनों पर भी जंगल लगाना चाहिये। नीचे मैं जमीनों के उपयोग का एक आदर्श बंटवारा दे रहा हूं, जिसकी ओर हमें बढ़ना चाहिये।

जंगल	१६%	१२.८ करोड़	एकड़
गैरआबाद	२४%	१९.२	,, ,,
उपजाऊ परती जमीन	५%	४.०	,, ,,
चारागाह	५%	४.०	,, ,,
कृषि	५०%	४०.०	,, ,,
	१००%	८० करोड़ एकड़	

उपर्युक्त आंकड़ों के अनुसार चरागाह मौसमी परती और आबाद खेतों का रकबा लगभग ४८ करोड़ एकड़ के होता है। इस पूरे क्षेत्र-फल को यदि बदल कर वैज्ञानिक ढंग से खेती की जाय तो हमें परती चारागाह और आबाद जमीनों का पूरा फायदा मिलेगा।

लेख को समाप्त करने से पहिले, हमें दो और प्रश्नों का जवाब दे देना है। कुछ लोगों का ख्याल है कि बड़े फार्मों को छोटे टुकड़ों में बांट कर हम व्यक्तिगत स्वामियों की संख्या बढ़ायगे और इस तरह यह समाजवाद की प्रगति में बाधक होगा। एक तो यह याद रखना है कि बड़े फार्मों पर बँटवारे के बाद भी सहयोगी प्रथा पर खेती हो, यह हमारी मांग बराबर रही है। सहयोगी खेती ही हमारा लक्ष्य है। परन्तु १००० एकड़ वाले और दो एकड़ वाले में सहयोग का सम्बन्ध हो ही नहीं सकता। जमीन का पुनर्वितरण ही सहयोगी खेती की आबोहवा तैयार करेगा। इससे किसानों को समाजवाद के झंडे के नीचे लाने के लिये उनका सहयोग प्राप्त करना संभव होता है। तीसरे जमीन का बँटवारा व्यक्ति-सम्पत्ति के प्रति आदर और उसके जोर को जड़मूल से उखाड़ देगा। बँटवारे

के बाद व्यक्तिगत सम्पत्ति के प्रति आदर भाव को कोई लौटा नहीं सकेगा।

अन्त में मैं एक चेतावनी देना चाहता हूँ कि पुरानी जमीनों की पैदावार बढ़ाने और नई जमीनों को आबादी में लाने का द्वन्द नहीं खड़ा करना चाहिये। यह एक दुखद सत्य है कि प्रति एकड़ पैदावार घटती जा रही है। नीचे के आंकड़े खेतिहर पैदावार के संकट को स्पष्ट जाहिर करते हैं :—

प्रति एकड़ पैदावार पाउन्ड में

	१९३८–३९	४४–४५	४५-४६	४६-४७	४७-४८	४८-४९
चावल	७९३	७१७	७०३	७२९	७२१	६९६
गेहूँ	६१८	६०४	५४१	४३७	५९३	५७३
मक्की	६५९	६४६	५९४	५७७	६११	५२९

(भारत सरकार के आर्थिक और आंकड़े सम्बन्धी सलाहकार द्वारा प्रकाशित।)

महायुद्ध से पीड़ित पश्चिमी जर्मनी ने भी १९३८-३९ से अपनी खेतिहर पैदावार को ५% से ८% तक ज्यादा कर लिया है।

यह स्पष्ट है कि प्रति एकड़ पैदावार को बढ़ाना है। राष्ट्रिय महान प्रयत्न में पैदावार बढ़ाने और नयी जमीनों को आबादी में लाने का सम्मिलित कार्यक्रम रहना चाहिये।

इसके बिना दुखी किसानों का दिल उठ नहीं सकता। ज्यादातर किसानों के पास जमीन के छोटे टुकड़े हैं। यों तो इलाके इलाके में परिस्थिति अलग-अलग है, परन्तु मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि ५०% जोत ५ एकड़ से कम की हैं। बंगाल जांच कमीशन ने

आंकड़ों से साबित किया था कि ४६% किसान परिवारों के पास २ एकड़ जमीन हैं। पञ्जाब में गांवों की जांच करने से पता चला कि,

एक एकड़ से कम जमीन वालों की संख्या— १७.१%;

एक से तीन एकड़ तक जमीन वालों की संख्या— २५.५%;

तीन से पाँच एकड़ तक जमीन वालों की संख्या— १४.९% है।

इससे छोटे टुकड़ों में न खेती ही अच्छी हो सकती है, न जोतने वालों का पेट ही भर सकता है।

इससे भी कठिन समस्या है बिना जमीन वालों की। जमीन थोड़े से लोगों के पास इकट्ठी होती रहती है। कई विदेशी पर्यवेक्षकों का कहना है कि १८८० के लगभग हिन्दुस्तान में कोई बेजमीन का नहीं था। आज उनकी संख्या १८ करोड़ के लगभग है, याने खेती करने वालों का ७० प्रतिशत है। इसमें खेत मजदूरों के अलावे मैं उनको भी शामिल कर रहा हूँ, जो दूसरों की जमीन बटाई और ठेके पर जोतते हैं। इनका प्रश्न हल न हुआ तो, देश एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता और न श्रम की प्रतिष्ठा होगी, न सहयोग की भावना।

इस दिशा में श्री विनोबा भावे जो कर रहे हैं, उसे भी जानना और समझना पाठकों के लिये आवश्यक है, इसलिये उनके विचारों को प्रमाणित रूप में आगे दिया जा रहा है।

श्री विनोबा भावे

दूसरा

श्री विनोबा भावे का परिचय

[श्री विनोबा भावे के विचार और कार्य पद्धति की जानकारी देने के साथ ही यह आवश्यक था कि उनका परिचय भी संक्षेप में दिया जाय। इसलिए हिन्दी के सिद्धलेखक प्राध्यापक श्री धर्मप्रिय लालजी द्वारा प्रस्तुत यह निबन्ध यहां दिया जा रहा है। —सम्पादक]

•

भारतीय संस्कृति के परम प्रसिद्ध पोषक श्री विनोबा भावे का जन्म बम्बई प्रान्त के कुलाबा जिले के गागोदा गांव में हुआ था। आप एक महाराष्ट्र ब्राह्मण हैं। आपके पितामह और माता पिता सभी धार्मिक पुरुष थे। धार्मिक वातावरण में पलने के कारण विनोबा का जीवन संयम और व्रत के आधारपर निर्मित हुआ है। आप की माता धर्म प्रिय थीं, फिर भी विचारों की स्वतन्त्रता और कर्मों में बुद्धि की संगति अधिक पसन्द करती थीं। इसे ही दूसर

शब्दों में क्रान्तिकारी विचारों की उपासिका कहा जा सकता है। श्री विनोबा का प्रारंभिक विद्याभ्यास बड़ोदा के हाई स्कूल में ही हुआ। १९०७ ई० में आप वहां के हाई स्कूल में भर्ती हुए और १९१६ तक आप की शिक्षा विदेशी शिक्षा-पद्धति पर ही चलती रही। इन्टरमीडियेट की पढ़ाई जब चल रही थी, तभी आप के मन में इस शिक्षा-पद्धति के विरुद्ध विद्रोही भावना उत्पन्न हुई और १९१६ ई० में आपने अपना पढ़ना बंद कर दिया तथा जिज्ञासु तपस्वी की तरह विश्वके रहस्य की खोजमें काशी चले आए। आपके बाद ही आप के दो भाई भी गृहत्यागी हुए। इनके सब से छोटे भाई का नाम बालकोबा जी है।

धर्म मार्ग का प्रसिद्ध जिज्ञासु नैष्ठिक ब्रह्मचारी का कठोर जीवन केवल व्यक्तिगत साधना के लिए ही निर्मित नहीं था। उसमें लोक पक्ष की प्रबलता स्पष्ट दीखती थी। गृहत्याग करने के बाद से ही गम्भीर स्वाध्याय और ज्ञान प्राप्ति के कार्य तीव्र गति से प्रारंभ हो गए।

श्री विनोबा ज्ञान-क्षेत्र में शंकरके अद्वैतवाद और व्यवहार क्षेत्र में बुद्ध के अहिंसावाद के कट्टर अनुयायी कहे जा सकते हैं। इन्होंने जीवन भर सिद्धान्तों के व्यावहारिक परीक्षण किए हैं और अपना सम्पूर्ण जीवन उन्हीं परीक्षणों से प्राप्त सूत्रों पर नियमित और संचालित करने का सदा प्रयत्न करते रहते हैं। उनके चरित्र का जिन लोगों ने निकट से अध्ययन किया है वे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके हैं। स्वयं गान्धी जी भी अपने इस शिष्य की महानता और चारित्रिक विशेषता से सदा दंग रहा करते थे। यह ठीक है कि जो जितना छिपता है, संसार उसे जानने को उतना ही उद्विग्न रहा करता है। विनोबाजी प्रचार की अपेक्षा शान्त सेवा का जीवन अधिक पसन्द करते हैं। इन्हें कर्मवादी संत कहने में जरा भी संकोच नहीं होना चाहिए। इन्होंने आत्म लाभ की सर्व सहल कुंजी के रूप में रचनात्मक कार्यक्रम को अपनाया है, इसीका परिणाम

है कि ये अहर्निश सूतयज्ञ की अग्नि शिखा को प्रज्वलित रखते हैं। कहा जाता है कि ये अपने उस अतिथि को उपालंभ की दृष्टि से देखते हैं, जो इनसे मिलने जाते समय, अपने सूतयज्ञ के साधनों को घर पर ही भूल आते हैं। यह बात तो है बड़ी छोटीसी, पर इसमें उनके चरित्र की महानता छिपी है। विनोबा जीने सूत यज्ञ को केवल गरीबीके निवारण का महत्वपूर्ण साधन ही नहीं समझा है, बल्कि भौतिकवादीयुग की यान्त्रिक बुराई के नाश की महौषधि के रूपमें एवं आत्मविश्वास के जितने तत्व हैं उनके उद्‍भावक के रूप में इसको स्वीकार किया है। यही कारण है कि उपवास जैसे कठोर व्रत की अपेक्षा रचनात्मक कार्यक्रम को ये बहुत ही ऊंचा स्थान देते हैं। बल्कि शारीरश्रम को तो यह बहुत बड़ा महत्व देते हैं।

एकबार की बात है कि ये अत्यन्त दुर्बल हो गए थे। गाँधी जी ने प्रश्न किया कि विनोबा इतने दुर्वल होकर, इतना सारा काम करने में कैसे समर्थ होते हैं। इस का उत्तर देते हुए इन्होने बताया कि काम करने की इच्छा शक्ति से। अर्थात् इच्छा शक्ति के बलपर ही विनोबा जीवन की पगडंडी पर निर्भय और निश्चिन्तभाव से आगे बढ़ते जा रहे हैं।' इनकी सब से बड़ी विशेषता है मन,'बचन और कर्मकी एक-रसता। 'मन' वचन और कर्म में समन्वय और सामंजस्य रखने के कारण ही विनोबा अपने पथके आप पथिक हैं। यही कारण है कि ये महात्मा गांधी तक के मुजबल बन गये थे। १९२१ में गांधीजी ने जब वर्धा आश्रम की स्थापना की थी, विनोबा जी सर्वप्रथम आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए थे। १९४० में गांधी जी ने व्यक्तिगत सत्याग्रह की क्रियात्मक योजना प्रस्तुत की। उसके परीक्षण के लिए सर्वप्रथम आदर्श सत्याग्रही श्री. विनोबा जी ही चुने गए। इस प्रकार संसार की आँखों से दूर छिपछिपकर चलनेवाला कर्मनिष्ठ सन्त को संसार के समक्ष

लाने का श्रेय भी महात्मा गान्धी को ही मिलना चाहिए। इस घटना से श्री विनोबा जी न केवल भारत अपितु ब्रिटेन की आँखों में भी प्रत्यक्ष हो गए। गांधी के पदचिन्हों पर पद रखकर चलने वाले राजनीतिक संघर्ष से दूर कैसे रह सकते थे। सर्वप्रथम १९२२ में देश के हित का ख्याल कर नागपुर झंडा - सत्याग्रह के सिलसिले में गिरफ्तार हुए। दूसरी जेल - यात्रा १९३२ में हुई और १९४० के उपरान्त तो, ये जैसे जेल को अधिक प्यार करने लगे थे। १९४० से १९४४ तक की अवधि में इन्हें कई बार जेल की यात्रा करनी पड़ी। ऐसा अनुमान होता है कि जेल का एकान्त जीवन इनके आध्यात्मिक चिन्तन के लिए उपयुक्त पड़ता था।

श्री विनोबा जी तो पहले दुनिया की नजरों से दूर रहना चाहते थे, पर राष्ट्र का हितैषी यह नीति कब तक अपना सकता है ? जब जब राष्ट्र पर संकट आया, देशके हृदय पर आघात हुआ, पददलित मानवता ने सिसकियां ली, तब तब, विनोबा का दृढ़ आसन डोल उठा। अपनी सम्पूर्ण निष्ठा, अपने सम्पूर्ण तपोबल और अपनी सारी इच्छा शक्ति से विनोबा जी सेवा में लग गए और अभी भी इस धर्म का निर्वाह करते ही जा रहे हैं। यह ऊपर ही लिखा जा चुका है कि श्री विनोबा जी न केवल गांधीवाद के प्रत्यक्ष एवं सजीव प्रतीक हैं बल्कि उनकी अपनी मौलिकता भी है। इस मौलिकता का आधार इनके गम्भीर अध्ययन और सतत चिंतन हैं। स्वाध्याय के प्रति उनका मोह इतनी अधिक है कि ५० वर्ष की उम्र में भी उन्होंने अरबी जैसी कठिन भाषा का अध्ययन - लोभ नहीं छोड़ा। श्री आजाद तो इनकी उच्चारण शुद्धता देखकर आश्चर्य चकित होगए थे। इस समय विनोबा जी सतरह - अठारह भाषाओं के ज्ञाता हैं, कुछ के तो वे अधिकारी विद्वान भी हैं। संस्कृत और गणित शास्त्र तो

उनके लिए सर्वस्व हैं। इनदोनों ने विनोबा जी के चरित्र निर्माण में बड़ा सहयोग दिया है। यह इनका संस्कृत-प्रेम ही है, जिसने वेदोंसे लेकर गीता तक की धार्मिक पुस्तकों की संगति में लाकर इन्हें संत बनाया है और गणित शास्त्र के प्रति अगाध अनुराग के कारण विनोबाजी में स्पष्टता, पूर्णता, लगन और अध्यवसाय दीखते हैं। उनके कामों में कल्पना कम और यथार्थ अधिक है। वे अपनी पैनी दृष्टि और अलौकिक सूझ से वास्तविक समस्या की मूलगत कठिनाई को सरलता से समझ लेते हैं और फिर. उसके निराकरण में इसप्रकार जुट जाते हैं कि दर्शकों पर अव्यक्त रूपसे उसका गहरा असर पड़ता है। उनकी कार्यप्रणाली और स्पष्ट पथनिर्देश के कारण ही उनके पास उनके अनुयायियों का एक ऐसा दल स्वयं गठित हो गया है, जिसके सम्बन्ध में गाधीजी को भी अनेक बार प्रशंसा करनी पड़ी थी। यह है विनोवा जी के चरित्र का प्रभाव। इस चरित्र के निर्माण में जितना हाथ धर्म-भाव का है, उतना ही मौलिक एवं तात्विक चिन्तन का भी। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि विनोबा जी हिन्दू धर्म से परिचित और मुस्लिम धर्म या इसाई धर्म से अपरिचित हैं। सभी धर्मों की चर्चा उनके पास चलती रहती है। धर्मके अतिरिक्त समाजशास्त्र, चिकित्साशास्त्र, नागरिक विज्ञान, आदि विभिन्न समाज, अर्थ या व्यक्ति से सम्बन्ध रखने वाले विषयों पर ये सदा चर्चा किया करते हैं। आदर्शवाद की काल्पनिक दुनियां में विचरण करने की अपेक्षा यथार्थ की कठोर धरा पर उतर कर ही विनोबा जी हमारी व्यक्तिगत या सामूहिक समस्या का समाधान खोजने के आदी हैं। इन्हें दूसरे शब्दों में मानव-वादी दार्शनिक ऋषि कहा जा सकता है।

इनके चरित्र का यदि सूक्ष्म विश्लेषण किया जाय तो एक साथ ही समय की पावन्दी, त्याग की असीम भावना, इच्छा शक्ति की प्रबलता,

कल्याणमार्ग में अनुरक्ति, ब्रह्मचर्य, स्वाध्याय और चिन्तन की लगन, मितभाषिता, दंभ और द्वेष का विरह, और इसी प्रकार के और न जाने कितने मानवोचित गुणों का एकीकरण इनके चरित्र में मिलता है। यदि इन सभी गुणों पर प्रकाश डाला जाय तो, एक नहीं अनेक घटनाएं उद्धृत की जा सकती हैं, जिनका कि उनके वास्तविक जीवन से सीधा सम्बन्ध है। एक घटना ही इस पर प्रकाश डालने के लिए पर्याप्त है। एक बार आश्रम से १ वर्ष की छुट्टी लेकर वे संस्कृत पढ़ने बाहर चले गए थे। गान्धीजी को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि ठीक १ वर्षके बाद निश्चित दिन पर विनोबा जी वापस आ गए, जबकि उनके इस आगमन-समय की किसी को याद तक न थी। इस समय की पाबन्दी से महात्मा जी स्वयं इतने प्रभावित हुए थे कि वे सदा इसकी चर्चा किया करते थे। गांधी जी को जो सब से अधिक प्रभावित करती थी, वह थी इनकी अहिंसाके प्रति अगाध श्रद्धा और सत्य के प्रति असीम प्रेम।

युद्ध के ये मानो जन्मजात विरोधी हैं। महात्मा गांधी की हत्या के अवसर पर आपने जो मुद्रा प्रकट की थी, उससे आपकी स्थितप्रज्ञता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। ३१ जनवरी को पवनार में, ठीक गांधीजी की अमानुषिक हत्या के बाद, आपने अपने भाषण में कोई ऐसी बात नहीं कही, जिससे किसी के प्रति आपका कलुषभाव प्रकट हो। आपने आत्मदमन पूर्वक बड़े प्रेमसे अपने उद्गार प्रकट किए। यही अवस्था उस समय थी, जब आपने जमनालाल बजाज जी के निधन के उपरान्त अपने विचार व्यक्त किए थे। आप तो गीता के सिद्धान्तों के मानने वाले हैं, चोला बदलने में बुराई नहीं अच्छाई ही है। आपको दुःख होता भी तो कैसे ? तत्वदर्शी ऋषि केवल एक जीवन तक ही अपनी दृष्टि संकुचित नहीं रखा करता है।

दुबली पतली देह में व्यायाम द्वारा स्फूर्ति और सुडौलपने की रक्षा करते हुए आप सदा उत्साह का अनुभव करते हैं। यन्त्रों की दुनियां से दूर अपनी आवश्यकताओं को सीमित करने के आप पक्षपाती हैं। ग्रामोद्योग और रचनात्मक कार्यक्रम के प्रति विशेष अभिरुचि इसी बात की पुष्टि करती है। प्रचार और प्रदर्शनों की अपेक्षा मौन भाव से की गई सेवा ही आपको प्यारी लगती है। गान्धी जी के आश्रम से कुछ कोस दूर रहते हुए भी आप ने उनके दर्शन की विशेष उत्सुकता कभी प्रकट नहीं की। यहां तक कि कांग्रेस के विशेष अधिवेशनों में भी जाने से आप घबड़ाते हैं। आप कभी यह नहीं चाहते हैं कि आपके व्याख्यान पत्रों में छपें, आपके हस्ताक्षरों के लिए लोग आपको तंग करें, आपके चित्र अखबारों के पन्नों को सुशोभित करें। यह तो यश की कामना करने वालों का लक्ष्य रहता है। आपने जीवन में वीतरागिता पाई है। एकबार लोगोंने हस्ताक्षर देने को विवश किया पर आप ने यह कहकर विपत्ति टाल दी कि आप बिना पारिश्रमिक काम नहीं करते और हस्ताक्षर के लिए पारिश्रमिक नहीं लेते। आप यह चाहते हैं कि लोग पूरी मजदूरी देकर ही उत्पादकों से सामान खरीद उनका उपभोग करें। कम कीमत देकर खरीदी गई खादी को भी आप नापसन्द करते हैं। सब से उत्तम तो यह है कि लोग स्वयं कातें और खादी पहनें। सूत कातना विनोबा जी के लिए अनिवार्य कार्य सा होगया है। ये घंटों पूर्ण मनोयोग से कातने का काम करते रहते हैं। सूत कहीं टूटता ही नहीं और ठीक इसी तरह इनके जीवन में सदा बहनेवाली सेवाभावना की पावन धारा कभी टूटती ही नहीं।

सेवा—भावना की महत्ता तो इसी से प्रकट है कि ये गीता के प्रवचन से लेकर शौचालय की सफाई तक समान भाव से करते हैं। न

पहले में अधिक उत्साह और न दूसरे में जरा भी क्षोभ। बात यह है कि बुनियादी शिक्षा में शरीर श्रम को प्रमुख स्थान देने वाले इस संत को शारीरिक परिश्रम से घृणा हो ही कैसे सकती है। महात्माजी की मृत्यु के उपरान्त विनोबा जी ने अपनी कार्य पद्धति बदल दी है। गांधी जी की तरह मानवधर्म का उपदेश देने श्री विनोबा जी पैदल यात्रा में निकल पड़े हैं। एक महान सामाजिक परिवर्तन यह शान्ति और प्रेम से करना चाहते हैं।

तीसरा

भूमि-दान यज्ञ

आचार्य विनोबा भावे की अपील

मेरे प्यारे भारतवासी बन्धुजन,

गये वर्ष गरमी के दिनों में, मैं तेलगाना में घूमता था। वहां जो विकट समस्या खड़ी थी, उसके बारे में मेरा चिन्तन रोज चलता था। एक दिन हरिजनों की मांग पर मैंने ग्रामवालों से भूमि-दान की बात कही। गांववालों ने वह बात मान ली और मुझे पहिला भूमिदान मिला। अठारह अप्रैल का वह दिन था, उसके बाद भूमिदान-यज्ञ की कल्पना मुझे सूझी और उसको तेलगाना के दौरे में मैंने आजमाया, परिणाम अच्छा रहा। दो महीनों में बारह हजार एकड़ जमीन मिली। वहां की

भूमिदान—यज्ञ में 'दान' शब्द आया है, उससे परहेज करने की जरूरत नहीं है। 'दानम् संविभागः' दान याने सम्यक विभाजन। यह है शंकराचार्य द्वारा दान की व्याख्या। उसी अर्थ में हम उस शब्द का प्रयोग करते हैं। जिसको जमीन मिलेगी, वह मुफ्त पाने वाला नहीं है वह जमीन पर मेहनत मशक्कत करेगा, अपना पसीना उसमें मिलायेगा, तब उसे पा सकेगा। इसलिए उसे दीन बनाने का कारणनहीं है। उसका अपना अधिकार हम उसे दिला रहे हैं।

हम विनयसे, प्रेम से और वस्तुस्थिति समझा कर माँगते हैं। हमारे तीन सूत्र हैं :—

(१) हमारा विचार समझने पर, अगर कोई नहीं देता है, तो उससे हम दुःखी नहीं होते हैं; क्योंकि हम जानते हैं, जो आज नहीं देता है वह कल देनेवाला है। विचार-बीज उगे बगैर नहीं रहता।

(२) हमारा विचार समझकर अगर कोई देता है, तो उससे हमें आनन्द होता है; क्योंकि उससे सद्भावना पैदा होती है।

(३) हमारा विचार समझे बगैर, किसी दबाव के कारण अगर कोई देता है, तो उससे हमें दुःख होता है। हमें किसी तरह जमीन बटोरनी नहीं है, बल्कि साम्ययोग और सर्वोदय की वृत्ति का निर्माण करना है।

* * * *

मैं मानता हूँ कि यह एक ऐसा कार्यक्रम हमें मिला है कि जिसमें सब पक्षों के लोगों को समान भूमि पर काम करने का मौका मिलता है। लोग कांग्रेस की शुद्धि की बात करते हैं। शुद्धि की तो संस्थाओं के लिये जरूरत है। लेकिन कांग्रेस का नाम इसलिए लिया जाता है कि वह एक संस्था है। मेरा विश्वास है कि कांग्रेस और दूसरी संस्थायें जिस कार्यक्रम

को अपनायेंगी और सत्य अहिंसा के तरीके से उसे चलायेंगी, तो उससे सबकी शुद्धि होगी, सबका बल बढ़ेगा और सबमें एकता आयगी।

मेरे भारतवासी बन्धुजनों, आपसे मेरी प्रार्थना कि है कि आप इस प्रजासूय यज्ञ में अपना भाग दें और इस काम को सफल करके आर्थिक क्षेत्र में अहिंसा की प्रतिष्ठापना करें। मेरा इस काम के लिए तिहरा दावा है। एक तो यह कि भारतीय सभ्यता के लिए अनुकूल है। दूसरा, इसमें आर्थिक और सामाजिक क्रान्ति का बीज है। और तीसरा यह कि इससे दुनिया में शांति स्थापना के लिये मदद मिल सकती है।

मैं जानता हू कि सारे हिन्दुस्तानके सामने कोई कार्यक्रम रखने का मेरा अधिकार नहीं है। लोगों को आदेश देनेवाला मैं कोई नेता नहीं हूं। ग्रामीणों की सेवा को ही अपनी परमार्थ साधना समझने वाला मैं एक भक्ति मार्गी मनुष्य हू। आज अगर गाधीजी होते तो इस तरह लोगों के सामने मैं उपस्थित नहीं होता। बल्कि वही देहात का भगी काम और वही कांचनमुक्त खेती का प्रयोग करता हुआ मै आपको दीखता। लेकिन परिस्थितिवश मुझे बाहर आना पड़ा है, और एक महान् यज्ञ का पुरोहित बनने की धृष्टता करनी पड़ी है। यह धृष्टता या नम्रता जो भी हो, परमेश्वर को समर्पण करके, मैं सब भाई बहनों के सहयोग की याचना कर रहा हूं।

पड़ाव मेहरावा
(जिला जौनपुर)
२५-४-५२

श्री विनोबा भावे के उद्‌गार

(१)

हमारा यह मानव-समाज हजारों वर्षों से इस पृथ्वी पर जीवन बिता रहा है। पृथ्वी इतनी विशाल है कि पुराने जमाने में, इधर के मानव की उधर के मानव से कोई पहचान नहीं रहती थी। हरएक को शायद इतना ही लगता था कि अपनी जितनी जमात है, उतनी ही मानव-जाति है। पृथ्वी के उधर क्या होता होगा, इसका भान भी शायद उन्हें नहीं था। लेकिन जैसे जैसे विज्ञान का प्रकाश फैलता गया, मनुष्य का सम्पर्क सृष्टि के साथ बढ़ता गया और मानसिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, सभी दृष्टियों से मानवों का आपसी संपर्क भी बढ़ता गया। जब कभी दो राष्ट्रों का या दो जातियों का सपर्क हुआ तो हर बार वह मीठा ही साबित हुआ हो, ऐसी बात नहीं है। कभी वह मीठा होता था, कभी कड़ुआ; लेकिन कुल मिलाकर उसका फल मीठा ही रहा। इस बात की मिसाल दुनियां भर में मिल सकती है। लेकिन सारी दुनिया की मिसाल हम छोड़ भी दें और केवल भारत का ही ख्याल करें, तो मालूम होगा कि बहुत प्राचीन जमाने में यहां जो आर्य लोग रहते थे, उनकी संस्कृति हिन्दुस्तान की पहाड़ी संस्कृति थी और दक्षिण में जो द्रविड़ लोग रहते थे, उनकी संस्कृति समुद्र की संस्कृति थी। इस तरह द्रविड़ों और आर्यों की संस्कृति के मिश्रण की एक नई संस्कृति बनी। पहले ये दोनों संस्कृतियां, उत्तर और दक्षिण की अलग-अलग रहीं। हजारों वर्षों तक इन लोगों में आपस में कोई संबंध नहीं था, क्यों कि बीच में एक बड़ा भारी दंडकारण्य पड़ा था। लेकिन फिर दो जमातों का संबंध हुआ। उनमें से कुछ मीठे और कुछ कड़ुवे अनुभव आये और उसका नतीजा आज का भारतवर्ष है। द्रविड़ लोग यहां के बहुत प्राचीन लोग थे। द्रविड़ों और आर्यों, इन दोनो की संस्कृति के संगम का लाभ हिन्दुस्तान को मिला और उससे एक ऐसा मिश्र राष्ट्र बना, जिसमें उत्तर और दक्षिण के

अच्छे अंश एक साथ अनजाने मिल गये, उत्तर और दक्षिण एक हो गये। उत्तर के लोग ज्ञान-प्रधान थे तो दक्षिण के लोग भक्ति-प्रधान थे। इस तरह ज्ञान और भक्ति का संगम हो गया, लेकिन इसके बाद यहां जो मिश्र समाज बना, उसकी व्यापकता भी एकांगी साबित हुई।

लेकिन बाहर से मुसलमान लोग यहां आए और अपने साथ एक नई संस्कृति ले आए। उनकी नई संस्कृति के साथ यहां की संस्कृति की टक्कर हुई। मुसलमानों ने अपनी संस्कृति के विकास के लिए दो मार्ग अपनाये, ऐसा दीखता है। एक हिंसा का और दूसरा प्रेम का। ये दो मार्ग दो धाराओं की तरह एक साथ चले। हिंसा के साथ हम गजनी, औरंगजेब आदि का नाम ले सकते हैं तो दूसरी तरफ प्रेममार्ग के लिए अकबर और कबीर का नाम ले सकते हैं। हमारे यहां जो कमी थी, वह इस्लाम ने पूरी की। इस्लाम सबको समान मानता था। यद्यपि उपनिषद् आदि में यह विचार मिलता है; लेकिन हमारी सामाजिक व्यवस्था में इस समानता की अनुभूति नहीं मिलती थी। हमने उस पर अमल नहीं किया था। व्यावहारिक समानता का विचार इस्लाम के साथ आया। इस्लाम के आगमन के समय यहां अनेक जातियां थीं। एक जाति दूसरी जातियों के साथ न शादी-ब्याह करती थी, न रोटी-पानी। इस तरह जहां देखो, वहां चौखटें बनी हुई थीं, लेकिन धीरे-धीरे दो संस्कृतियां नजदीक आईं। दोनोंके गुणोंका लाभ देशको मिला। इस सिलसिले में जो लड़ाई-झगड़े हुए और संघर्ष हुआ, उसका इतिहास हम जानते ही हैं। जो लोग यहां आये, उन्होंने तलवार से हिन्दुस्तान जीता, हिन्दुस्तान के लोग लड़ाई में हार गये, यह कोई नहीं कह सकता। बल्कि लड़ाइयां हुईं, उसके पहले ही फकीर लोग यहां आए। वे गांव-गांव घूमे और उन्होंने इस्लाम का संदेश पहुंचाया। यहां के लिए वह चीज एकदम आकर्षक थी।

बीच के जमाने में हिन्दुस्तान में बहुत से भक्त हुए, जिन्होंने जातिभेद के खिलाफ प्रचार किया और एक ही परमेश्वर की उपासना पर जोर दिया। इसमें इस्लाम का बहुत बड़ा हिस्सा था। हिन्दुस्तान को इस्लाम की यह बड़ी देन है। इस तरह पहले ही जो संस्कृति द्रविड़ और आर्यों की अच्छाइयों के मिश्रण से बनी थी, उसमें यह नया रसायन दाखिल हुआ।

इसके बाद—कुल तीन सौ साल पहले की बात है। यूरोप के लोगों को मालूम हुआ कि हिन्दुस्तान संपन्न देश है और वहां पहुंचने से लाभ हो सकता है। इसी समय यूरोप में विज्ञान की प्रगति हुई। ये लोग हिन्दुस्तान आ पहुंचे। हिन्दुस्तान में अभी तक जो प्रगति हुई थी, उसमें विज्ञान की कमी थी। यह नहीं कि विज्ञान यहां था ही नहीं। यहां वैद्यक-शास्त्र मौजूद था, पदार्थ-विज्ञान-शास्त्र मौजूद था, लोगों को रसायन-शास्त्र का ज्ञान था। अच्छे मकान, अच्छे रास्ते अच्छे मदरसे यहां बनते थे—यानी शिल्प-विज्ञान भी था। अर्थात् हिन्दुस्तान एक ऐसा प्रगतिशील देश था, जहां उस जमाने में अधिक-से-अधिक विज्ञान मौजूद था। लेकिन बीच के जमाने में यहां विज्ञान की प्रगति कम हुई। उसी जमाने में यूरोप में विज्ञान का आविष्कार हुआ और पाश्चात्य लोग यहां आ पहुंचे। अब उनके और हमारे बीच संघर्ष शुरू हुआ। उनके साथ का हमारा संबंध कड़ुवा और मीठा दोनों प्रकार का रहा तथा अब इस मिश्रण से एक और नई संस्कृति बनी। कुछ मिश्रण तो पहले ही हो चुका था। फिर जो-जो प्रयोग यूरोपवालों ने अपने देश में किये, उनके फलस्वरूप न सिर्फ भौतिक जीवन में, बल्कि समाजशास्त्र आदि में भी परिवर्तन हुए और जैसे-जैसे अंग्रेज, फ्रेंच जर्मन रशियन आदि के विचारों से परिचय होने लगा, वैसे-वैसे वहां के नव-विचारों का सम्बन्ध भी बढ़ने लगा। आज हम जहां जाते हैं, वहां सोशलिज्म,

कम्युनिज्म आदि पर विचार सुनते हैं। ये सारे विचार पश्चिम से आये हैं अब इन सब विचारों में झगड़ा शुरू हुआ है। उनमें से कचरा-कचरा निकल जायगा। हमारी संस्कृति कुछ खोयेगी नहीं; बल्कि कुछ पायेगी ही। यही देखो न! हिन्दुस्तान में—बावजूद इसके कि पश्चिम के विचारों का प्रवाह निरन्तर यहां आता रहा—पहले के जमाने में जितने आध्यात्मिक विचार वाले महापुरुष पैदा हुए उनसे कम इस जमाने में नहीं हुए। यहां नाम गिनने में तो समय जायगा। इस समय भी संघर्ष हो रहा है, टक्कर हो रही है, मिश्रण हो रहा है। यह जो बीच की अवस्था है, उसमें कई प्रकार के परिणाम होते हैं।

यह तो मैंने प्रस्तावना के तौर पर अपने कुछ विचार रखे, ताकि हिन्दुस्तान को हालत आप लोग अच्छी तरह समझ सकें।

गान्धीजी के जाने के बाद जब मैं सोचता रहा कि अब मुझे क्या करना चाहिए तो मैं निर्वासितों के काम में लग गया। परन्तु यहाँ व कम्युनिस्टों के प्रश्न के बारे में मैं बराबर सोचता रहा। यहां की खून आदि घटनाओं के बारे में मुझे जानकारी मिलती रहती थी, फिर भी मेरे मन में कभी घबराहट नहीं हुई; क्योंकि मानव जीवन के विकास का कुछ दर्शन मुझे हुआ है। इसलिए मैं कह सकता हूँ कि जब जब मानव-जीवन में नई संस्कृति का निर्माण हुआ है, वहां कुछ संघर्ष भी हुआ है, रक्त की धार भी बही है। इसलिए हमें बिना घबड़ाये शान्ति से सोचना चाहिए और शान्तिमय उपाय ढूंढ़ना चाहिए।

यहाँ शान्ति के लिए सरकार ने पुलिस भेज दी है; लेकिन पुलिस कोई विचारक होती है ऐसी बात नहीं है। वह तो शस्त्रसम्पन्न होती है और शस्त्रों के जोर पर ही मुकाबला करती है। इसलिए जंगल में शेरों के बन्दोबस्त के लिए पुलिस को भेजना बिल्कुल कारगर हो सकता

है और वह पुलिस शेरों का शिकार करके हमें उन शेरों से बचा सकती है; लेकिन यह कम्युनिस्टों की तकलीफ शेरों की नहीं, मानवों की है। उनका तरीका चाहे गलत क्यों न हो, उनके जीवन में कुछ विचार का उदय हुआ है, और जहाँ विचार का उदय हुआ होता है, वहाँ सिर्फ पुलिस से प्रतिकार नहीं हो सकता। सरकार यह बात जानती है। बावजूद इसके, अपना कर्तव्य समझ कर सरकार ने पुलिस की योजना की है। इसलिए मैं उसे दोष नहीं देता।

तो मैं इस तरह प्रस्तुत समस्या के बारे में सोचता था और मुझे तब सूझा कि इस मुल्क में घूमना चाहिए। लेकिन घूमना हो तो कैसे घूमा जाय? मोटर आदि साधन विचार-शोधक नहीं है। वे समय-साधक हैं, फासला काट सकते हैं। जहाँ विचार ढूंढ़ना है, वहाँ शान्ति का साधन चाहिए। पुराने जमाने में तो ऊंट, घोड़े आदि थे। लोग उनका उपयोग भी करते थे और रात भर में दो सौ मील तक निकल जाते थे। परन्तु शंकराचार्य, महावीर, बुद्ध, कबीर, चैतन्य, नामदेव जैसे लोग हिन्दुस्थान में घूमे और पैदल ही घूमे। वे चाहते तो घोड़े पर भी घूम सकते थे; परन्तु उन्होंने त्वरित साधन का सहारा नहीं लिया; क्योंकि वे विचार का शोधन करना चाहते थे, और विचार-शोधन के के लिए सब से उत्तम साधन पैदल घूमना ही है। इस जमाने में यह साधन एकदम सूझता नहीं; परन्तु शान्ति-पूर्वक विचार करें तो सूझेगा कि पैदल चले बिना चारा नहीं है।

इस तरह मैं वर्धा से शिवरामपल्ली आया
अब कोई छः हफ्ते होते हैं। इस बीच मैंने हर
परिचय प्राप्त किया। कम
सारभूत अंश हमें ग्रहण
अमल कैसे किया जाय

गया। ब्राह्मण मैं था ही, वामनावतार का काम मैंने ले लिया और भूमिदान मांगना शुरू कर दिया।

पहले-पहल लगता था कि इसका परिणाम वातावरण पर क्या होगा? थोड़े-से अमृतबिन्दुओं से सारा समुद्र मीठा कैसे होगा? पर धीरे-धीरे विचार बढ़ता गया। परमेश्वर ने मेरे शब्दों में कुछ शक्ति भर दी। लोग समझ गये कि यह जो काम चल पड़ा है, क्रान्ति का है और सरकार की शक्ति के परे है; क्योंकि यह काम तो जीवन बदलने का काम है।

अब लोग दान देने लगे। एक जगह हरिजनों ने अस्सी एकड़ मांगे और एक भाई ने सौ एकड़ दे दिये। इस तरह लोग मुझे देने लगे। यद्यपि लोगों ने मुझे काफी दिया तो भी मेरा काम इतने से पूरा नहीं होता। आज नलगुण्डा के एक भाई आये। उन्हों ने पहले पचास एकड़ दिये थे। उनकी जमीन का कुछ झगड़ा था, उसका निपटारा हो गया और आज उन्हों ने पाँच सौ एकड़ जमीन दे दी। उनके हिस्से की जमीन का यह चौथा हिस्सा होता है।

इस तरह जब विचार फैलेगा तब काम होगा। मैं चाहता हूं कि दरिद्रनारायण को, जो भूखा है और अब जाग गया है, आप अपने कुटुम्ब का एक हिस्सा समझ लें और आपके परिवार में चार लड़के हैं तो उसे पाँचवां मान लें। एक भाई के पास पाँच एकड़ जमीन थी। उस भाई से मैंने जमीन मांगी तो उसने मुझे कहा कि मेरे घर में आठ लड़के हैं। मैंने पूछा कि अगर नौवां आया तो उसे भी सहोगे या नहीं? उसने कहा, "हाँ।" मैंने कहा, "यही समझो कि मैं नौवां हूँ और 'मुझे भी कुछ दे दो।" समझ लीजिये की दस हज़ार एकड़वाला सौ एकड़ देता है। आंकड़ा दीखने को बहुत बड़ा दीखता है, पर दाता और दरिद्रनारायण दोनों के

हिसाब से वह कम है। इस आंकड़े से मैं तो संतुष्ट हो जाऊंगा, परन्तु देनेवालों को नहीं होना चाहिए। अगर ऐसा होता कि यहां कोई भूल की या चन्द लोगों को संकट-निवारण की समस्या होती और मैं दान मांगता तो थोड़ा-थोड़ा देने से भी काम चल जाता, परन्तु यहां तो एक राजकीय समस्या हल करनी है, एक समाजिक समस्या सुलझानी है, जो समस्या न सिर्फ इन दो जिलों की है, न सिर्फ हिन्दुस्तान की है, बल्कि पूरी दुनियां की है। और जहां ऐसी राजनीतिक व समाजिक क्रान्ति करने की बात है, वहां तो मनोवृत्ति ही बदल देने की जरूरत होती है। अगर कोई छोटा सा संकल्प होता तो अल्प दान से भी काम चल जाता; परन्तु यहां दस हजार जमीन रखनेवाले यदि सौ एकड़ देने लगेंगे तो काम नहीं चलेगा।

उन्हें तो दरिद्रनारायण को अपने परिवार का एक हिस्सा समझकर दान देना चाहिए। मैं तो *गरीब और श्रीमान सबों का मित्र हूं।* मुझे तो मैत्री में ही आनन्द आता है। जो शक्ति मैत्री में है, वह द्वेष में नहीं है। अनेक राजाओं ने लड़ाइयां लड़कर जो क्रान्ति नहीं की, वह बुद्ध, ईसा, रामानुज आदि ने की। इनमें से एक-एक आदमी ने जो काम किया, वह अनेक राजाओं ने मिलकर नहीं किया। अर्थात् प्रेम और विचार की तुलना में दूसरी कोई शक्ति नहीं है। इस वास्ते बार-बार समझाने का काम पड़े, तो भी मैं तैयार हूं। दो दफा समझाने से कोई न समझ सका, तो तीन दफा समझाऊंगा। तीन दफा समझाने से यदि नहीं समझ सका तो चार दफा समझाऊंगा और चार दफा समझाने से भी नहीं समझेगा, तो पांच दफा समझाऊंगा। समझाना, यही मेरा काम है। जबतक मैं कामयाब नहीं होता तबतक मैं हारूंगा नहीं, निरंतर समझाता ही रहूंगा।

मैं चाहता हूं जो वह तो, सर्वस्व-दान की बात है। जैसा पोतना

कवि ने (तैलगु) भागवत में बताया है—"वक्षिदंडुल मंगि धर्मव- त्सलवनु दीनुल गाव चिंतिचुवाडु धर्मवत्सलवनु।" माता-पिता के समान चिन्ता करने की यह उपमा मैं आपको लागू करना चाहता हूँ। माता पिता जिस प्रेम से बच्चों के लिए काम करते हैं, भूखे रहकर उन्हें खिलाते हैं, उनके लिए सर्वस्व का त्याग करते हैं, वही शक्ति और वही प्रेम मैं आपलोगों से प्रकट कराना चाहता हूँ।

आज मैं जेल में यह जानने लिए कम्युनिस्ट भाइयों से मिलने गया था कि उनके क्या विचार हैं? उनके साथ जो बातचीत हुई, वह पूरी यहाँ बताने की आवश्यकता नहीं है। पर उन्होंने एक सवाल मुझसे किया कि क्या आप इन श्रीमानों को वापस अपने घरों में ले जाकर बसाना चाहते हैं? क्या उनके दिल में परिवर्तन होनेवाला है? आपको वे लोग ठग रहे हैं। कुछ इस तरह का उनका भाव था। मुझे वहाँ उनसे बहस नहीं करनी थी, न उनके हर प्रश्न का जवाब ही देना था। लेकिन अगर यह बात सही है कि हरएक के हृदय में परमेश्वर विराजमान है और हमारे श्वासोच्छ्वास का नियमन वही करता है और सारी प्रेरणा वही देता है तो, मेरा विश्वास है कि परिवर्तन जरूर हो सकता है। अगर कालात्मा खड़ा है और कालात्मा परिवर्तन करना चाहता है, तो परिवर्तन होने ही वाला है। मनुष्य चाहे या न चाहे, जब मनुष्य प्रवाह में पड़ता है, तब उसकी तैरने की शक्ति ही उसके काम नहीं आती, प्रवाह की शक्ति भी काम आती है। उसी तरह मनुष्य के हृदय में परिवर्तन के लिए काल-प्रवाह मददरूप होता है। आज तो सबकी भूमि तपी हुई है। ऐसी तपी हुई भूमि पर प्रेम की दो बूँदें छिड़काने का काम अगर भगवान मुझ से करवाना चाह रहा है तो मैं वह खुशी से कर रहा हूँ। मैं तो गरीबों से भी जमीनें ले रहा हूँ। एक एकड़वाले से भी मैं एक गुंठा ले आया हूँ। अगर वह

आधा गुँठा देता तो भी मैं ले लेता। लोग पूछते हैं कि एक गुँठा जमीन का मैं क्या करूंगा? मैं कहता हूँ, "कोई हर्ज नहीं। जिसने मुझे यह एक गुँठा दिया है, उसीको ट्रस्टी बनाकर मैं वह जमीन उसे सौंप दूंगा और कहूँगा कि जो पैदावार उसमें होगी, वह गरीबों को दे देना।" एक एकड़वाले में एक गुँठा देने की वृत्ति होना उसे ही मैं विचार क्रान्ति कहता हूँ। जहां विचार-क्रान्ति होती है, वहीं जीवन प्रगति की ओर बढ़ता है। 'अभिप्राज्यम् राज्यम् तृणमिव परित्यज्य सहसा'—एक घास के तिनके की तरह राज्य का परित्याग करनेवाले त्यागी इस भूमि में हो गये हैं।

विचार-शक्ति की कोई हद नहीं होती। एक विचार एक मनुष्य को ऐसा सूझता है कि उससे मनुष्य के जीवन में क्रान्ति हो जाती है। आपने देखा होगा कुछ महापुरुष ऐसे भी होते हैं, जिनके विचार में ऐसी शक्ति होती है कि दूसरे के जीवन को वे पलट देते हैं। इसलिए विचार को जगाने के लिए मैंने उस गरीब की एक गुँठा जमीन ले ली और जहां मैं उन श्रीमानों से जमीन ले रहा हूँ, वहां उनके सिर पर मेरा वरदहस्त है— "भाइयों, तुम्हें अब शहर में भागकर जाने की आवश्यकता नहीं है। कबतक भागते रहोगे!" यानी जहां मैंने श्रीमानों से सौ एकड़ दान लिया, वहां मैंने उनके मन में एक अच्छा विचार भी जगा दिया। हरएक मनुष्य के दिल में अच्छे बुरे विचार होते हैं। अब उसके हृदय में एक लड़ाई शुरू होती है, एक महाभारत-युद्ध शुरू होता है।

"सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय
सच्चाऽसच्च वचसी पस्पृधाते
तयोर्यत् सत्यं यतरत् ऋजीयः
तदित् सोमोऽवति हंति आ असत्"

जाननेवाले जानते हैं कि हर मनुष्य के हृदय में सत् और असत् की

लड़ाई नित चलती रहती है। जो सत् होता है, उसकी रक्षा होती है और जो असत् है, उसका खात्मा होता है। इसीलिए दाता ढोंगी है, ऐसा मानने का कारण नहीं है। परन्तु उसके द्वारा अन्याय के भी कई काम हुए होते हैं। अन्याय के बिना हजारों एकड़ जमीन कभी जमा हो सकती है! अर्थात् जिन्होंने दान दिया है, उन श्रीमानों के जीवन में कई तरह के अन्याय और अनीति का होना संभव है। परन्तु उनके हृदय में भी एक झगड़ा शुरू होगा कि क्या हमने जो अन्याय किया है, वह ठीक है? परमेश्वर उन्हें बुद्धि देगा और वे अन्याय छोड़ देंगे। परिवर्तन इसी तरह हुआ करते हैं।

मेरी प्रार्थना है कि अब देने का जमाना आया है, आप सब लोग दिल खोलकर दीजिये। देने से एक दैवी सम्पत्ति का निर्माण होता है। उसके सामने आसुरी सम्पत्ति टिक नहीं सकती, आसुरी संपत्ति लुट जाना चाहती है। वह ममत्वभाव पर आधार रखती है, समत्व नहीं जानती। दैवी तो समत्व पर आधार रखती है। दैवी और आसुरी सम्पत्ति की यही पहचान है।

जहां मैं दान लेता हूं, वहां हृदय-मंथन की, हृदय-परिवर्तन की, मातृ वात्सल्य की, भ्रातृ-भावना की, मैत्री की और गरीबों के लिए प्रेम की आशा करता हूं। जहां दूसरों की फिक्र की भावना जागती रहती है, वहां समत्व बुद्धि प्रकट होती है, वहां वैरभाव टिक नहीं सकता। वैरभाव का स्वतंत्र अस्तित्व ही नहीं होता। पुण्य में ताकत होती है, पाप में कोई ताकत नहीं होती। प्रकाश में शक्ति होती है, अन्धकार में कोई शक्ति नहीं होती। प्रकाश को अन्धकार का अभाव नहीं कह सकते। प्रकाश वस्तु है, अन्धकार अवस्तु है। लाखों वर्षों के अन्धकार में प्रकाश ले जाइये, एक क्षण में अन्धकार का निवारण हो जायगा। वैसे आज पुण्योदय हुआ है। उसके सामने वैरभाव टिक नहीं सकता। यह

भूदान-यज्ञ एक अहिंसा का प्रयोग है, जीवन-परिवर्तन का प्रयोग है। मैं तो निमित्त मात्र हूं। आप भी निमित्त मात्र हैं। परमेश्वर आप लोगों से और मुझसे काम कराना चाहता है। वह काल-पुरुष की, परमेश्वर की प्रेरणा है। इसलिए मैं मांग रहा हूं, आप लोग दीजिये और दिल खोलकर दीजिये। जहां लोग एक फुट जमीन के लिए झगड़ते हैं, वहां मेरे कहने से लोग सैकड़ों-हजारों एकड़ जमीन देने के लिए तैयार हो जाते हैं। आप समझिये कि यह परमेश्वर की प्रेरणा है। इसके साथ हो जाइये। इसके विरोध में मत खड़े रहिये। इससे भला-ही भला होगा।

आज मैं फिर से कहता हूं कि हम विज्ञान से पूरा लाभ उठाना चाहते हैं। अगर हम विज्ञान से पूरा लाभ उठायें, तो इस भूमि को हम स्वर्ग बना सकते हैं। लेकिन फिर हमें विज्ञान के साथ हिंसा को नहीं, अहिंसा को जोड़ना होगा। अहिंसा और विज्ञान के मेल से ही यह भूमि स्वर्ग बन सकती है। हिंसा और विज्ञान के मेल से वह स्वर्ग नहीं बन सकती, बल्कि खत्म हो सकती है।

पहले लड़ाइयां छोटी छोटी होती थीं। जरासंध-भीम लड़े, कुश्ती हुई, पांडवों को राज्य मिल गया, सारी प्रजा खून-खराबी से बच गई। अगर इस जमाने में वैसी लड़ाइयां लड़ी जायं तो इसमें हिंसा होने पर भी नुकसान कम है। इसलिए यह द्वंद्व मैं कबूल कर लूंगा। अगर हिटलर और स्टालिन कुश्ती के लिए लिए खड़े हो जाते हैं और तय करते हैं कि जो हारेगा वह हारेगा और जो जीतेगा जीतेगा, तो मैं उसे कबूल कर लूंगा। और अगर दुनिया वह द्वंद्व देखने को आती है, तो मैं उसका निषेध नहीं करूंगा; क्योंकि दुनियां का उसमें विशेष नुकसान नहीं होगा। परन्तु द्वन्द्व-युद्ध का जमाना अब बीत गया है। पहले द्वंद्व होते थे। फिर हजारों लोग आपस में लड़ने लगे। हजारों की लड़ाई खत्म हुई तो लाखों लड़ने लगे। उससे भी नतीजा नहीं निकला। फिर क्या, इधर

बीस लाख तो उधर पचीस लाख इधर पचीस तो उधर पचास लाख इस तरह यह जमाना आया है कि हजारों-लाखों नहीं, करोड़ों लोग आप में लड़ने लगे हैं। मनुष्य के सामने सवाल यह है कि या तो 'टोटल वा की तैयारी करो या हिंसा छोड़ो और अहिंसा को अपनाओ। मैं कम् निस्टों को यही समझाता हूं कि भाइयों, तुम लोग कहीं दो-चार ए करते हो, कहीं दो-चार मकान जलाते हो, कहीं कुछ लूट-खसोट क लेते हो, रात में आते हो, दिन में पहाड़ी में छिपते हो; लेकिन अ छिपने का जमाना खत्म हो चुका है। अब ऐसी हरकतों से कोई ल नहीं है। अगर लड़ाई लड़नी है, तो विश्व युद्ध (वर्ल्ड वार) की तैया करो और उसी की राह देखो। लेकिन जबतक करोड़ों के पैमाने हिंसा करने की तैयारी नहीं करते तबतक छोटी-छोटी लड़ाइयों का त तरीका छोड़ दो और तुम्हें वोट देने का जो अधिकार मिला है उस लाभ उठाओ। प्रजा को अपने विचार के लिए तैयार करो। आणविक यु या परिशुद्ध प्रेम, ऐसी समस्या विज्ञान ने हमारे सामने खड़ी कर दी है

इसलिए अगर प्रेम का, अहिंसा का तरीका अजमाना चाहते हो, इन जमीनों का ममत्व छोड़ दो, नहीं तो हिंसा का ऐसा जमाना आनेवाल है कि उसमें सारी जमीनें और उस जमीनपर रहनेवाले प्राणी खत्म हो जायेंगे। यह समझकर कि भगवान् ने यह समस्या हमारे सामने खड़ कर दी है, भाइयो, निरंतर दान दिया करो।

इस भूदान-यज्ञ के पीछे जो सात्विक विचार धारा है, वह मैं आपके सामने रख दी है। मैंने यह कुछ विचार इसीलिए किया कि य वारंगल काकतियों की राजधानी है, बड़ा शहर है। यहां शिष्टों औ सभ्यों का निवास है, बुद्धिमानों का केन्द्र है। अगर मैं अपना विच यहां प्रकट करूं तो मेरा यह विचार फैलेगा।

पड़ाव—वारंगल (तेलंगाना)
२१-५-५१

(२)

आज का दिन एक पवित्र दिन है। वैसे तो भगवान के दिए हुए सारे दिन पवित्र ही होते हैं और खासकर वे दिन अत्यन्त पवित्र होते हैं जब मनुष्य को कोई अच्छा संकल्प, अच्छा विचार सूझता है, अच्छा काम उससे होता है। लेकिन अलावा इसके, समाज–जीवन में और भी कुछ ऐसे दिन होते हैं, जबकि मनुष्य की सद्भावना जाग्रत हो उठती है। ऐसे दिनों में से आज का दिन है

मेरी यह यात्रा परमेश्वर ने मुझे सुझाई है, ऐसा ही मुझे मानना पड़ता है। छः माह पहले मुझे खुद ऐसा कोई खयाल नहीं था कि जिस काम के लिए आज मैं गांव-गांव, द्वार-द्वार, घूम रहा हूं, वह कार्य मुझे करना होगा। परमेश्वर उसमें मुझे निमित्त बनाएगा। लेकिन परमेश्वर की कुछ ऐसी योजना थी, जिससे यह काम मुझे सहज ही स्फुरित हुआ और उसके अनुसार कार्य होने लगा। होते-होते उसे ऐसा रूप मिल गया, जिससे लोगों की नजरों में भी यह बात आ गई कि यह एक शक्तिशाली कार्यक्रम है, जो हमारे देश के लिए ही नहीं, बल्कि आज के काल के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यह एक युगपुरुष की मांग है। जिस तरह की भावना लोगों के दिलों में आ गई, उसका प्रतिबिम्ब मेरे हृदय में भी उठा। नतीजा यह हुआ कि तेलगाना की यात्रा समाप्त करने के बाद बारिश के दिन वर्षा में बिताने के लिये मैं परंधाम जा बैठा और दो-ढाई महीने वहां रहकर फिरसे निकल पड़ा हू और घूमते घूमते आपके इस गाव में आ पहुचा हूं।

आज महात्मा गांधी के जन्म का दिवस है। हम रोज सूत कातते हैं। आज भी यहा पर समुदाय के साथ सूत-कताई हुई। चन्द लोग उसमें सम्मिलित थे। तादाद उनकी बहुत कम थी। फिर भी आज की

खुल-कवाई में मुझे एक विशेष हस्ती की अनुभूति हुई और अभी जो मैं बोल रहा हूँ वह उसकी हाजिरी में बोल रहा हूँ।

जो काम मैंने उठाया है, वह तो गरीब लोगों की भक्ति का काम है, श्रीमान लोगों की भक्ति का काम है, सब लोगों की भक्ति उसमें हो जाती है। मेरा अपना विश्वास है कि यह कार्य सब लोगों के दिल में खींचनेवाला है। मैं जमीन मांगता फिरता हू। किसी रोज कम मिलती है तो मुझे यह नहीं लगता कि जमीन कम मिली। मुझे यही लगता है जो भी मुझे मिलता है, केवल प्रसाद रूप है। आगे तो भगवान खुद अपने हाथों से भर-कर देनेवाला है। जब वह अनंत हाथों से देने लगेगा तब मेरे यह दो हाथ निकम्मे और अपूर्ण साबित होंगे। आज तो केवल हवा तैयार करने का काम हो रहा है, परमेश्वर का बल इस कामके पीछे है, ऐसा प्रतिक्षण मैं महसूस कर रहा हूं।

आज के पवित्र दिन में उससे पहले यह प्रार्थना करता हूं कि जमीन वो लोग मुझे दें, न दें, जैसी तेरी इच्छा हो, वैसा होने दें, लेकिन मेरी तुमसे इतनी ही मांग है कि मैं तेरा दास हूं मेरी हस्ती मिटा, मेरा नाम मिटा। तेरा ही नाम दुनिया में चले। तेरा ही नाम रहे और जो भी राग द्वेष आदि विकार मेरे मन में रहे हों, उन सबमें से तू इस बालक को मुक्त करना। इसके सिवा अगर मैं और कोई भी चाह अपने मन में रखता हू वो तेरी कसम! मैं तुलसीदास की भाषा में बोल रहा हूं। लेकिन यह मेरी आत्मा बोल रही है।

"*चहों न सुगति सुमति सम्पति कछु रिधि सुति विपुल बड़ाई*"

मुझे और किसी चीज की जरूरत नहीं, तेरे चरणों में स्नेह बढ़े, प्रेम बढ़े।

लोग पूछते हैं कि आप दिल्ली कब पहुचेंगे? मैं कहता हूं "मुझे मालूम नहीं, सब उसकी मर्जी पर निर्भर है।" मेरी कुछ उम्र भी हो चुकी

है। शरीर भी कुछ थक गया है। लेकिन अन्दर में यही वृत्ति रहती है और नित उसीका अनुभव करता हूं। जरा ५ मिनट भी विश्राम मिलता है, थोड़ा भी एकान्त मिलता है, तो मनमें यह वासना उठती है कि मेरा सारा अहंकार खतम हो जाय। इसके सिवाय कुछ भी विचार मन में नहीं आता। आज परमेश्वर के साथ मैं क्या भाषा बोल रहा हूं? मनुष्य की वाणी से क्या बयान कर रहा हूं? मैं बोल रहा हूं कि आज ईश्वर के साथ बापू की हस्ती का अनुभव मैं कर रहा हूं। मुझपर उनके निरन्तर आशीर्वाद रहे हैं। मैं तो स्वभाव से एक जंगली जानवर रहा हूं। न मुझे सभ्यता मालूम है। मैं तो बड़े-बड़े लोगों के सम्पर्क से भी डरता हूं। लेकिन आजकल निःशंक होकर हर किसी के घर में चला जाता हूं। नारद-मुनि देवों में, राक्षसों में, दानवों में, सबमें चले जाते थे, उनका कहीं भी अप्रवेश नहीं था। वही हालत मेरी है। यह सब बापू के आशिर्वाद का चमत्कार है। मेरा विश्वास है कि मेरे इस काम में दुनिया के जिस कोने में वे बैठे होंगे, उनके हृदय का समाधान होता होगा।

"मार्ग में तारण मिले, सन्तराम दोई
सन्त सदा सीस ऊपर, राम हृदय होई।"

मीराबाई का यह वचन मुझपर भी ठीक लागू होता है। मुझे भी मार्ग में दो ही तारण मिले। भगवान की कृपा से एक का आशीर्वाद मेरे सिर पर रहा है। दूसरे का स्थान मेरे हृदय में रहा है।

आज मैं कुछ बोल तो रहा हूं; लेकिन मुश्किल से बोल सकने वाला हूं। कोशिश तो मैं यह करूंगा कि जो कहूं, अच्छी तरह कह सकूं। मुझे बहुत दफा लगता है कि मैं घूमने के साथ-साथ कुछ बोल भी लेता हू। लेकिन इससे क्या परिणाम आता होगा? कल की ही बात है। एक गांव में जहां हम ठहरे थे, जहां सारा दिन बितायाथा, जहां मेरा एक व्याख्यान भी हुआथा, वहां उस व्याख्यान के परिणाम-स्वरूप या कैसे भी

कहिये, चार एकड़ जमीन मुझे मिली। फिर व्याख्यान समाप्त करके मैं अपनी जगह गया और उपनिषद् का चिन्तन शुरू किया। आजकल मेरे पास उपनिषद् रहती हैं।

दस मिनट हुए कि एक भाई आये, जो न मेरी प्रार्थना में शामिल थे, न मेरा व्याख्यान सुन पाये थे। कहने लगे, "जमीन देने आया हूं।" ये भाई ६ मील दूरी से आये थे। अपनी ६ एकड़ जमीन में से एक एकड़ मुझे दे गये। मैंने सोचा, "किसकी प्रेरणा से यह हो रहा है? जहां मैं दिन भर रहा, जहां मैंने व्याख्यान सुनाया, वहां ४ एकड़ और जहां मेरा व्याख्यान नहीं हुआ वहा से एक गरीब आता है और ६ में से एक एकड़ दे जाता है।" यह हुआ न हुआ कि एक दूसरे भाई जो दूरी से आये थे, बावन एकड़ देकर चले गये। मैं सोचने लगा कि लोगों के दिलों पर किसी चीज का असर होता है। आदमी को शब्दों की जरूरत क्यों पड़नी चाहिए? अगर केवल जीवन शुद्ध हो जाय तो एक शब्द भी बोलना न पड़े और संकल्पमात्र से केवल घर बैठे काम हो जाय। लेकिन वैसा शुद्ध जीवन परमेश्वर जब देगा तब होगा। आज तो वह मुझे घुमा रहा है। मांगने की प्रेरणा दे रहा है। इसलिए मैं बोलता हूं और मांगता हूं। लेकिन मेरे मन में यह सदेह नहीं है कि मेरे मांगने से कुछ होनेवाला नहीं है। जो होनेवाला है या हो रहा है, सब उसी की प्रेरणा से हो रहा है।

मैंने शुरू में ही कहा कि महाकोशल का यह आखरी बड़ा मुकाम है। परन्तु अगर दिल्ली से वापस आना हुआ तो महाकोशल में से ही गुजरना पड़ेगा। यहां के लोगों से मिलने का फिर और एक अवसर मुझे प्राप्त होगा। मैं इस मध्यप्रदेश से बहुत कुछ आशा रखता हूं, इस वास्ते कि मैं ३० साल से इस मध्यप्रदेश में ही रहता आया हूं। अपने

जीवन की जवानी का समय मैंने मध्यप्रदेश के लोगों की सेवा में बिताया। यहां के लोगों ने देखा कि कई राष्ट्रिय आन्दोलन आये और गए। लेकिन यह शख्स अपने काम में निरंतर रत रहा। उसने न इधर देखा, न उधर। इस तरह मेरे जीवन की बहुत-सी तपस्या इस मध्यप्रदेश में हुई, अलावा इसके, इस मध्यप्रदेश के जेल में ४ साल रहने का मौका मुझे मिला। वहां एक-दूसरे के निकट संपर्क में आना हुआ। जेल में जो रहते हैं वे एक-दूसरे को अच्छी तरह परख लेते हैं। वहां २४ घंटे परस्पर संबंध रहता है। इस तरह आपके उत्तमोत्तम लोगों के संपर्क में मैं आया। उन लोगों ने मेरा जीवन देखा। अगर मैंने कुछ किया तो सबपर प्रेम ही किया, और कुछ नहीं किया। यहां कितने विचार के लोग थे। अलग-अलग पक्ष के भी थे; परन्तु मैंने तो मनुष्य को मनुष्य के नाते पहचाना। इस तरह मेरा कोई गुणदोष उनसे छिपा नहीं रहा। जिनके साथ मैंने अपनी उम्र के ४ बरस बिताये, उनके सामने कोई गुण-दोष छिपकर नहीं रह सकता था। मैंने देखा कि ऐसा एक भी भाई नहीं जिसका प्रेम मुझे नहीं मिला। इसलिए मैं आप सब से बहुत आशा रखता हूं।

मैं चाहता क्या हूं? मेरे एक भाई ने लिखा है कि आपके लिए हजार रुपए जमा हुए हैं और सौ आदमियों के भोजन का प्रबंध भी किया गया है लेकिन यहां जो कुछ हुआ है और हो रहा है, एक परिषद् के लिए हो रहा है। मेरे स्वागत के लिये इतने पैसे की जरूरत नहीं। मेरा पेट बहुत छोटा है। उसके लिए इतने पैसे की आवश्यकता नहीं। मेरा काम किस तरह आगे बढ़ेगा इस बारे में जो सेवकगण यहां आ गये हैं वे विचार-विमर्श करेंगे और अपनी-अपनी जगह जाकर काम भी करेंगे। इसीलिये यह परिषद् बुलाई है। यद्यपि मेरी भूख बहुत कम है, तथापि दरिद्रनारायण की भूख ---

ज्यादा है। इसलिए जब मुझसे पूछते हैं कि आपका अंक क्या है, कितनी जमीन आपको चाहिए तो मैं जवाब देता हूं, "पांच करोड़ एकड़।" जो जमीन जेरे काश्त है उसी की मैं बात कर रहा हूं। अगर परिवार में पांच भाई हैं तो एक और छठवां मुझे मान लीजिये। चार हों तो पांचवा। इस तरह कुल जेरेकाश्त जमीन का यह पांचवां या छठवा हिस्सा होता है।

यह जो काम हो रहा है वह सामान्य दान का काम नहीं है, बल्कि भू-दान का है। अगर हम किसी को एक रोज भी खाना खिलाते हैं तो बहुत पुण्य मिलता है। एक रोज के अन्न-दान का अगर इतना मूल्य है तो एक एकड़ जमीन का, जिससे एक आदमी की सारी जिंदगी बसर हो सकती है, कितना मूल्य होगा! इसलिए दरिद्र नारायण के वास्ते सारे लोगों से कुछ न-कुछ मिलना चाहिए। इसी का नाम यज्ञ है। इसलिए हर शख्स से मैं कहता हू कि भाई मुझे कुछ-न-कुछ दे दो।

गांधीजी के बाद सर्वोदय के सिद्धांत को माननेवाले हम कुछ लोगों ने एक समाज बनाया है, जिसमें कोई किसी से द्वेष नहीं करता। सब सबसे प्रेम भाव रखते हैं। कोई किसी का शोषण नहीं करता। मेरा विश्वास है कि जैसे ही हम शोषण-रहित समाज का निर्माण कर सकेंगे, हिन्दुस्तान के लोगों की प्रतिभा प्रकट हुए बिना नहीं रहेगी। इसलिए हम सर्वोदयवालों ने निश्चय किया कि यह समाज-रचना हम बदल देंगे। मेरा इसमें विश्वास है, नहीं तो मुझे इस तरह खुले दिल से जमीन मांगने की हिम्मत नहीं होती। मैं जानता हूं कि जितनी मेरी योग्यता है उससे ज्यादा फल ईश्वर ने मुझे दिया है। मुझे जरा भी शिकायत नहीं कि मुझे फल कम मिला। इसलिए मेरा काम इतना ही है कि लोगों को मैं अपना विचार समझाऊं।

—सागर
२-८-५१

(३)

इस छोटे से गाँव में आप इतनी बड़ी तादाद में यहाँ आये हैं इसलिए मुझे बहुत खुशी हो रही है। हम तो हर एक गाँव में, चाहे छोटा हो या बड़ा, एक ही दिन रहते हैं। गाँव वालों की परिस्थिति को सुधारना ही मेरा उद्देश्य है। आज हमारे गांव वालों को कोई ज्ञान नहीं है। उन्हें किसी भी तरह की मदद नहीं मिल रही है। वहाँ के लोग ऐसी दशा में जीवन बिता रहे हैं कि बाहर वाले शायद विश्वास भी न करें। हमने उत्तर प्रदेश के बहुत सारे जिले घूमकर देखे कि लोग काफी परेशानहाल हैं। बार-बार अकाल पड़ता है। गाँव में कोई धन्धा नहीं रहा है, सिवाय इसके कि खेत पर मजदूरी करें। सब से बुरी बात यह है कि गांव वालों को किसी तरह का ज्ञान नहीं है। यहां आप लोग मेरा सम्मान करने आये हैं। आप अपमान नहीं बल्कि आदर करना चाहते हों, फिर भी यहाँ कुछ लोग बीड़ी पी रहे हैं। यह वे जान-बूझकर नहीं कर रहे हैं। यह सब अज्ञान से हो रहा है। हमारा मुल्क गर्म है और दिन भी गर्मी के हैं और लोग नजदीक नजदीक बैठे हैं तो इस समय बीड़ी पीने से क्या फायदा होगा? ठंडा पानी या शरबत पीयें तो कुछ गर्मी कम होगी। फिर भी अज्ञान के कारण लोग बीड़ी पीते हैं। पढ़ना लिखना सीख कर, सब कोई गांव छोड़कर शहर चले जाते हैं। फिर गाँव में या तो सिर्फ जानवर रह जाते हैं जो गाँवों को छोड़ नहीं सकते, और दूसरे किसान-मजदूर रहते हैं जो खेती को छोड़ नहीं सकते, लेकिन मौका मिला तो फौरन शहर की तरफ दौड़ते हैं। गांवों में रहना किसी को भी पसन्द नहीं है। न मालूम, उन्हें शहर में क्या अमृत मिलता होगा। वे गाँव इसलिए छोड़ते हैं कि गांवों में कोई काम नहीं है और गांव के अच्छे लोग अक्सर गांव में रहते नहीं हैं।

आज गांव का पैसा बाहर जा रहा है। गांव वालों को काम की

चीजें बाहर से खरीदनी पड़ती है। वे सिर्फ अनाज पैदा करते हैं। इ के अलावा गाँवों में ऊँच-नीच के भेद पड़े हैं। छूआछूत और जाति मेद इतने हैं कि कोई अक्लवाला वहां रहना पसन्द नहीं करता। गीता में भगवान कृष्ण ने कहा था कि 'हम ने चार वर्ण पैदा किये।' पर यहाँ तो हजारों वर्ण दीखते हैं। मनुष्य में इतने भेद हो गये हैं कि एक मनुष्य बिल्ली को तो अपने पास रखता है, दूध पिलाता है, लेकिन दूसरे मनुष्य को अछूत मानता है। वैसे मानव देह तो बड़े पुण्य से मिलती है और उसको हम अछूत मानें, यह उचित नहीं है।

आज गाँव में अनाज, कपड़ा, तालीम सबकी कमी है। व्यसन बहुत बढ़ गये हैं। शराब, चिलम, बीड़ी, अफीम आदि का प्रयोग चलता है। पहले से कई जातियां तो हैं ही और उस पर ये पार्टियाँ हैं, जो और भेद बढ़ा देती हैं। श्मशान में तो सब पार्टियाँ इकट्ठी हो जाती हैं, लेकिन तब तक हम अपना २ घमण्ड व अहंकार रखते हैं। ब्राह्मण अपने को सबसे ऊँचा और हरिजन अपने को सबसे नीच मानता है। किसी के पास ज्यादा जमीन है, किसी के पास कम। गांव में ताकत नहीं है। गाँव की जिन्दगी मुर्दे जैसी है। वहाँ ज्ञान नहीं है, प्रेम नहीं है, अब गांवों को किस तरह सुधारना चाहिए यह चिन्ता सब सज्जनों को हो रही है।

ऐसे ही सज्जनों की एक मण्डली सेवापुरी में आयी थी। जिस तरह भरद्वाज ऋषि के आश्रम में लोग इकट्ठा होते थे, वैसे ही काशी के नजदीक सेवापुरी में सब इकट्ठे हुए थे। गाँव का भला कैसे होगा, यह सोचकर, उन्होंने संकल्प किया कि अब सबको सेवा में लग जाना चाहिए। उन्होंने यह निश्चय किया कि वे भूमिहीनों के लिए २५ लाख एकड़ जमीन इकट्ठी करके बेजमीनों में बाटेंगे, गांव गांव जाकर लोगों को समझाएंगे कि अपनी खुद की बनी हुई चीजें इस्तेमाल करें, यंत्र की

है। जिस तरह बिजली का बटन दबाने से बिजली फैल जाती है वैसे ही यह विचार फैल गया है। यह सब परमेश्वर की कृपा है। नहीं तो इतना बड़ा काम मुझसे कैसे होता ? एक साल पहले मुझे यह काम पहाड़ सा लगता था और मैं सोचता था कि मैं इस पहाड़ पर कैसे चढ़ूंगा ? इसके पहले तो मन्दिर आदि के लिए जमीन मांगी गयी थी। लेकिन मन्दिर आदि को छोड़ कर, इस तरह जमीन मांगना आज तक नहीं हुआ। अब तो मैं हर गाँव के बेजमीनों के लिए हर गाँव में जमीन मांग रहा हूँ और लोग भी प्रेम-पूर्वक दे रहे हैं। मेरा पेट छोटा है लेकिन मुझे पाँच करोड़ एकड़ जमीन चाहिए।

पुराणों मे वामनावतार का उदाहरण दिया गया है। उसने बलि से सीर्फ तीन कदम जमीन मांगी। पहले विराट कदम में उसने सारी की सारी पृथ्वी ले ली, दूसरे कदम में आसमान ले लिया और फिर बलि से पूछा कि अब तीसरा कदम देने के लिए आपके पास क्या है। बलि ने सोचा कि जब मांगने वाला और देने वाला मौजूद हैं तो कुछ चीज तो बची होगी। फिर उसने वामन से कहा, आप अपना तीसरा कदम मेरे सिर पर रखो जिससे कि हम आपका बचन पुरा कर सकें। भगवान ने तीसरा कदम उनके सिर पर रख दिया और उसे दबाया जिससे कि वह पाताल में घुस गया और भगवान पाताल के द्वार पर रक्षण कर खड़े रहे। मैं भी वामन बनकर आया हूं और आप लोग बलि राजा हैं। मैं आप से सिर्फ तीन कदम जमीन मांगता हूं। पहला कदम यह कि आप अपने हिस्से का थोड़ा सा गरीब के लिए दें। हरेक को खाना पड़ता है, पीना पड़ता है। तो हरेक को देना भी चाहिए। हम जन्मे तो अकेले और मरेंगे भी तो अकेले। मरने के बाद भगवान आपसे पूछेगा कि आपने क्या पुण्य किया ? यह नहीं पूछेगा कि आपके बापने, आपकी बीबीने, आपके पुत्र ने क्या पुण्य किया था ? बाबा दादा का पुण्य हम नहीं

बता सकते, क्योंकि भगवान ने हमें अलग पैदा किया है, अलग अकल दी है तो पुण्य भी हमें अलग से करना होगा। वहाँ भगवान को हमें अपना किया हुआ पुण्य बताना पड़ेगा। दूसरों ने भोजन किया तो भी हमें भोजन की जरूरत महसूस होती है। किसी दूसरे ने पानी पिया तो हमारी प्यास नहीं बुझती। इसलिए सबको थोड़ा थोड़ा देना चाहिये।

दूसरा कदम यह है कि जिन्हें आप जमीन देते हैं उन्हें जमीन के साथ और भी कुछ दें। हम जब किसी को अपनी लड़की देते हैं तो केवल लड़की नहीं देते, लड़की के साथ और भी कुछ देते हैं। लड़की के घर में मदद की जरूरत हो तो हम मदद भी देते हैं। इसी तरह गरीबों को जमीन के साथ और भी चीजें देनी हमारा कर्तव्य है। सबके सुखसे सुखी होना, सबके दुःख से दुःखी होना यह मनुष्य की खूबी है। शेर या कुत्ते कभी एक दूसरे की परवाह नहीं करते और न इस तरह सब शेरों की या कुत्तों की भलाई के बारे में सोचने के लिये इकट्ठा होते हैं।

अब तीसरा कदम है। तीसरा कदम दान देने के लिये बलि जैसी अकल होनी चाहिये। पहले में मैंने गरीबों के लिये भूमि मांगी और दूसरे उनकी सेवा करने के लिये कहा। अब तीसरे कदम में मैं आपका दिमाग और सिर मांग रहा हूँ। जब तक सिर नहीं देते और अलग से रहते हैं, तब तक आप भगवान के प्यारे नहीं होते। यह शरीर तो पोला ही है। मिट्टी और हवा से बना हुआ है। खतम होने पर उसकी खाक हो जाती है। फिर यह अहकार किस लिये? मैं आपका अहंकार मांग रहा हूँ। मेरा तीसरा कदम यह है कि मैं चाहता हूँ कि आप सब नम्र बनें और अपना जीवन सबके लिये दें यह भावना आपके मनमें पैदा हो। इस जगत में मेरा और तेरा है, इसलिये सारे जीव बँधे हुए हैं। हरेक को अपना अपना लड़का देखकर खुशी होती है और दूसरों के लड़के को देखकर उसी तरह की भावना पैदा नहीं होती। यह तो ताज्जुब

की बात है। लड़के तो मां बाप के नहीं, भगवान के हैं। वह कोई मिट्टी की बनाई हुई चीज नहीं है। वह तो भगवान की देन है। इसलिये हमें सब बच्चों को अपना मानना चाहिये। भगवान कृष्ण अपने घर का मक्खन सबमें बांट देते थे। यशोदा तो चाहती थी कि मक्खन बेंचकर पैसा लायें, लेकिन भगवान चोरी करके मक्खन सब ग्वाल बालों को देते थे। शुकदेव और सूरदास ने भगवान की चोरी की प्रशंसा की है, वह किसलिये? इसलिये कि उन्होंने पहिले सबको दिया और फिर खुद खाया। मथुरा की लीला को लोग अब तक स्मरण करते हैं। अब तक कितने ही पैदा हुए और कितने ही मरे, कोई उन्हें जानता नहीं। इतने सारे आये और गये लकिन हम उन्हें भूल गये। परन्तु राम और कृष्ण का नाम हम आज भी लेते हैं क्योंकि वे सबके लिये जन्मे और सब के लिये मरे। हम राम का नाम लेते हैं, तो हमें राम जैसा काम भी करना चाहिये। राम जंगल में भटके, कृष्ण ने अर्जुन के घोड़ों की सेवा की, इसी तरह हमें भी काम करना चाहिये। काम किये बिना उनका नाम लेना हमारे लिए शोभा नहीं देता।

हम बड़े नहीं है, छोटे हैं। बड़े होते तो हवाई जहाज में घूमते हुए दिखाई देते। हम आप जैसे ही हैं। इसलिये पैदल यात्रा करके आपके पास भूमिहीनो के लिये जमीन मागने आया हूं। तुलसीदास जी ने कहा है कि सबसे प्यार करो, वैर छोड़ो तो आनन्द होगा, हरेक नगरी राम की अयोध्या नगरी बनेगी। दूसरे का हित देखो तो दुनिया में सब कुछ मिलता है। खुदगर्ज आदमी को अपनी भूख लगती है, लेकिन परोपकारी मनुष्य को सबकी भूख लगती है। वह सबकी चिन्ता करता है। इसलिये सब उसकी चिन्ता करते हैं। परोपकार से हम भी कुछ खोते नहीं, बल्कि भर भरके पाते हैं और वह भी दोनों दुनियां में, मनुष्य-जन्म लेकर यदि हमने सबका प्रेम नहीं हासिल किया, तो क्या हासिल किया? कुछ नहीं, हमने तो सब कुछ खोया।

आप सबको अपने गांव में अपना राज्य कायम करना है। गांव में सबको अन्न मिले, कपड़ा मिले, तालीम मिले, इसकी आपको ध्यान देना चाहिये। आज हम सब भिखारी हैं और भिखा की सरकार भी भिखारी होती है। गाव के पढ़े लिखे लोगों को गांव ही रहना चाहिये और आप सब को बिना शुल्क सिखाना चाहि बिना शुल्क सिखाने से विद्या बढ़ती है, घटती नहीं है। हर रोज तु रामायण व गांधी जी की किताबें आदि पढ़नी चाहिये। जिस गां रामनाम नहीं सुनाई देता, वह गाव नहीं, श्मशान है। पेट तो ज भी भरते हैं। इसलिये ज्ञान प्राप्त किए बिना हम मनुष्य नहीं ब सकेंगे। गांवों में हर रोज थोड़ा थोड़ा श्रवण होना चाहिए। यदि पीना रोज चाहिए तो ज्ञान भी रोज चाहिए। परसों का खाना आज नहीं देता। शरीर को तो हर रोज खाना चाहिए। इसी तरह आत्मा हर रोज ज्ञान चाहिए। शरीर के समान आत्मा को भी रोज धोना च शरीर धोया जाता है पानी से, और मन धोया जाता है श्रवण से। शरीर हर रोज गंदा हो जाता है। फिर भी हम इसे हर रोज धोकर सुथरा रखते हैं। वह गंदा होता जाता है और हम इसे धोते जाते हैं हारते नहीं। इसी तरह मनको भी हर रोज धोकर साफ रखना चा श्रवण किए बगैर हम खाना नहीं खायेंगे, यह नियम करना चाहिए। समझाने के वास्ते मैं यहा आया हूँ।

अब जो जमीन मिलेगी वह भगवान को समर्पित कर दी जायगी फिर प्रार्थना होगी और उसके बाद आप सब मिलकर दान दें। यहा ए भी ऐसा अभागा शख्स न रहे जिसने दान न दिया हो। हरेक को आ अपने शबरी के बेर और सुदामा के तन्दुल अर्पण करने चाहिए।

पड़ाव रामपुर (जि० जौनपुर)
२१-४-५२

(४)

समर्पणयोगी श्री गणेश शंकर जी विद्यार्थी जी की नगरी में आने का मुझे अवसर मिला है। इसलिये मुझे बहुत आनन्द हो रहा है। वर्षों से यहा के प्रेमी लोग मुझे बुला रहे थे। पर मैं अपनी जन-सेवा के कर्मयोग में लगा हुआ था, इसलिये नहीं आ सका। लेकिन परमेश्वर की ऐसी योजना थी कि एक महान यज्ञ को सम्पन्न करने के लिये मुझे उत्तर प्रदेश में घूमना था और यहां आने का मुझे यही मौका मिला। जिस काम के लिये मैं आया हूं, उसकी भूमिका मैं आज *आपके सामने रखूंगा और आज के अपने कर्त्तव्य के बारे में कल कुछ* कहूगा। इस तरह दो दिनों में आपके सामने अपने समग्र विचार रखूंगा।

यहा के लोगों ने मेरा काम बहुत उत्साह और लगन से किया है और मैं आशा करता हूँ कि आगे भी करेंगे। क्योंकि यह तो आरम्भ है। पूर्ति तो तब होगी, जब जो चीज हमें बनानी है वह बन जायगी। तब तक हमें आराम नहीं लेना चाहिये। एक काम खतम होने के बाद तुरन्त नये काम की प्रेरणा मिलनी चाहिये। मनुष्य का एक आयास सुफलित होता है, तो आर्य-पुरुष नये आयासों को आरम्भ कर देते हैं। एक के बाद एक, अधिक कठिन काम करने के लिए ज्यादा तपस्या करनी पड़ती है। यहां पहला कदम हो चुका, क्योंकि यहां के लोगों ने अपने जिले का कोटा पूरा किया है। इसका श्रेय किसको है? मैं मानता हूं कि जो इनके मानसिक कारणों में है वह है गणेश जी का समर्पण-यज्ञ। एक मनुष्य के जीवन से ऐसी पुण्य-परम्परा का निर्माण करना जो कभी टूटती नहीं, यह गणेश जी का काम है। जो बाहर बाहर से संगठन करते हैं, उनका संगठन कुछ समय के बाद ढीला पड़ता है। जो अपना जीवन शुद्ध बनाते हैं, ऐसे सन्तों की परम्परा

आगे चलाने के लिए लोग तैयार हो जाते हैं, यही सार मैं इस घटना से लेता हूं। यहां के काम के पीछे जो प्रेरणा है, वह बलिदान की है। बलिदान में कितनी शक्ति होती है, इसका सबूत यह काम दे रहा है।

यह कानपुर नगरी भारत के सप्तपुरियों में है। ऐसे नागरिकों से जहां पराक्रमी पुरुषों की परम्परा कायम है, हम बहुत आशा करते हैं। अभी जो उत्साह दिखाया आगे चलकर उससे भी अधिक उज्ज्वल रूप में दिखावेंगे तो तरुण लोग उत्तरोत्तर आगे बढ़ेंगे।

अब मैं अपने काम की भूमिका आपके सामने रखूंगा। जो इतिहास जानते हैं, उनको पता है कि भारत में कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक एक ही सत्ता, अशोक के जमाने से आज तक नहीं कायम हो सकी थी, वह आज हुई है। यह छोटी बात नहीं है। दो हजार साल के इतिहास में हमने कई अनुभव पाए हैं। जो सार्वभौम सत्ता आज तक नहीं थी, वह आज हमारे हाथ में आयी है। हमारे लिए तो यह सोचने का विषय है। सारे समाज की रचना नए सिरे से करनी है। निश्चय पूर्वक, धीर-गम्भीर बन कर कदम उठाना चाहिए। दो हजार सालों में ऐसी सत्ता हमारे हाथ में आई है, सो इसका कैसा उपयोग करें, यह हमें सोचना है, और फिर निश्चित रूप से सारे समाज की रचना करनी है। बीच के काल में वह रचना उच्छृंखल हो गई थी। पिछले चार-पांच सौ सालों में समाज में कोई रचना ही नहीं थी। जातियां थीं और वे काम करती थीं। पर सबके लिए एक योजना नहीं बनती थी। बड़े बड़े राजा और बादशाह आए परन्तु उनका प्रभाव समाज की रचना पर नहीं पड़ा। ऐसी कोई भी हुकूमत नहीं थी, जो समाज के लिए एक योजना बनाए। इसलिए अब हमें नए सिरे से रचना करनी है। यह बड़ा भारी काम है। भगवान बापू को ऐन मौके पर ले गया, जब कि हिंदुस्थान की आवाज को दुनिया भर में पहुंचाने का समय आया था।

मैं इसमें भी परमेश्वर का एक संदेश देखता हूँ। गुरू का उपयोग वह सिर्फ दर्शन कराने के लिए करता है और उसके बाद गुरू को उठा ले जाता है जिससे कि हम स्वतन्त्र बुद्धि से सोचें, तय करें और आगे बढ़ें। अब हमारी जिम्मेवारी भगवान की दृष्टि में बढ़ गई है। गांधी जी के जाने के बाद, हमने अपने को अनाथ पाया। लेकिन भगवान की यह इच्छा नहीं थी। वे तो हमसे स्वतन्त्र बुद्धि से काम चाहते थे। अब हमारे लिए सब दिशाएं खुली हैं। कौन सी दिशा लेनी है, यह हम तय कर सकते हैं। जो रास्ता हमारी सभ्यता के अनुकूल है, वह हमें लेना चाहिए। यदि हम खुद उनका संदेश नहीं सुनते, तो दुनिया को कैसे सुनायेंगे? रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा है कि हिन्दुस्थान मानो महा-समुद्र है। यहां दुनिया से कई जमातें आयीं और यहां की बन गईं। हमने सबोंका स्वागत प्रेम से किया। यहां के लोगों ने सारे विश्व को अपनाया और उनको अपना भारतीय रूप दिया। सबको पचा लेना, सबके साथ रहना, सबको हृदय से अपनाना, यह संदेश हमारा संदेश है। हमें उनका ध्यान में रखना चाहिए। हमारे समाज की शक्ति सबको हजम करने में है। उसका प्रयोग हम आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में कर सकते हैं या नहीं, यह मैं सोच रहा था। तेलंगाना जाने पर मुझे इसका दर्शन हुआ। तबसे मैं इसे परमेश्वर का आदेश समझकर घूम रहा हूं।

हमें कैसी समाज-रचना चाहिए, इस पर सोचना होगा। हिन्दुस्थान में तत्वज्ञान, अध्यात्म - विचार और समाज-शास्त्र के बारे में काफी प्रगति हुई है और पाश्चात्य राष्ट्रों में विज्ञान की हुई है। सारा भारत-खण्ड एक बनाया और यहां एक विचार को फैलाया। यह एक बड़ा भारी काम हमने किया है। तत्वज्ञानी ने हिन्दुस्थान को आत्मा का दर्शन कराने के लिए अनेक तरह के विचार दिए हैं। आखिर

एक सिद्धान्त स्थिर हो गया है। मनुष्य जीवन का अन्तिम आदर्श मु
है। मुक्ति, याने हम अपने को भूल जाय, अहंकार शून्य हो जांय,
मिट जांय। बिन्दु सिन्धु में लीन हो जाने से छोटा नहीं रहता है बा
बड़ा हो जाता है। उसी तरह हम भी अपने को मिटा कर समाज-
और विश्व-रूप बनें। मुक्ति का अर्थ यही है कि मानव अपने छोटे
जीवन को शून्य बनाये और समाज के, विश्व के जीवन में लीन हो जा
काम-क्रोध छोड़ दे। बिन्दु के समान हम परमेश्वर में सारी शक्ति ल
करें। हजार मस्तकों, हजार हाथों हजार नेत्रों से जो परमे
हमारे सामने खड़ा है, उसकी सेवा में लग जांय। विश्व-रूप भग
की सेवा करें। जब भगवान ने हिरण्यकश्यपु का विदारण किया,
प्रह्लाद ने उनकी स्तुति की। मुझे आपके इस रूप से डर नहीं ल
है, क्योंकि यह रूप बुराइयों को मिटाने वाला है। फिर उन्होंने भग
की प्रार्थना की है कि वे अकेले मुक्त होना नहीं चाहते। वे स
साथ लेकर मुक्त होना चाहते थे। इसमें मुक्ति की गलत व्याख्या
प्रहार किया गया है। कहा गया है कि जंगल जाकर तपस्या व
विकारों को छोड़ने से मुक्ति मिलती है। लेकिन प्रह्लाद ने समझाया
जंगल में किसलिए जाते हो। एक को छोड़ते हो और एक को पक
हो, तो मुक्ति कैसे मिलेगी? परमेश्वर तो सबसे दूर है। सारे स
के लिए अपना अहंकार छोड़ना यही मुक्ति है, त्याग है, भक्ति है
सन्यास है। उसके बाद सन्तों ने भी इसको बार-बार दुहराया
"नत्वहम् कामये राज्यम् न स्वर्गं न पुनर्भवम्" इसका मतलब यही है
हम राज्य, स्वर्ग और अपनी व्यक्तिगत मुक्ति नहीं चाहते हैं; बल्कि स
की सेवा करना चाहते हैं। जब तक मनुष्य आनन्द भोगने को इ
करता है, और मुक्ति को भी आनन्द का रूप मानता है, तबतक वा
और अहंकार मिटते नहीं हैं। मुक्ति का मतलब है हम खुद मिट ज

हजारों वर्षों की तपस्या और आध्यात्मिक प्रयोग के बाद ऋषियों ने और सन्तों ने यह बात हमें सिखाई है।

हमारी समाज-रचना की बुनियाद क्या हो? इस पर अब हमें सोचना है। हमारे लिए एक गहरी बुनियाद यहां के शास्त्रों ने बना रखी है। मानव जीवन का उद्देश्य मुक्ति है और जब तक मुक्ति नहीं मिलती, तब तक उसका पूरा उद्देश्य हासिल नहीं होगा। मुक्ति के लिए मर मिटना होगा। हम मिट जांय और समाज या विश्व रूप बन जांय। चाहे गंगा या यमुना का पानी हो, चाहे नाली का पानी हो, या लोटे का पानी हो, पानी तो यही चाहता है कि नीचे समुद्र की तरफ जायँ। नाले का या लोटे का पानी छोटा होने के कारण बीच में ही सूख जा सकता है और समुद्र तक पहुंच भी नहीं सकता। फिर भी उसकी कोशिश तो यही रहती है कि समुद्र की तरफ जाय। किसको कितना यश मिलता है, यह अलग बात है। लेकिन हम सबको समाज की सेवा में लग जाना है, याने समाज के सबसे नीचे के तबके के जो हैं, उनकी तरफ जाना है। हिमालय की तरफ नहीं। हमें नीचे झुक कर भगवान के चरण छूना है। जो दुखी हैं, पीड़ित हैं, वे ही भगवान् के चरण हैं। उनकी सेवा में अपना अखिल, व्यक्तित्व, और हस्ती मिटानी है। हमारे सन्तों ने कई तपस्यायें की हैं। मेरा ख्याल है कि यहां की भूमि में, आध्यात्मिक क्षेत्र में जितने प्रयोग हुए हैं उतने और किसी भी देश में नहीं हुए हैं।

हमारा ध्येय मुक्ति है। मेरी कोशिश यह है कि यही ध्येय सामने रखकर हम समाज की रचना करें, जिससे हम समाज को परिपूर्ण बना सकें और व्यक्तित्व की शक्ति समाज की सेवा में लगा सकें। जैसे राम राज्य में राजा राम, प्रजा राम, अधिकारी राम, सारे राममय थे, वैसे ही हमें करना है। यह सब करने की शक्ति अब हमारे हाथ आयी है।

हमें सबको समान भूमि पर लाना है और विषमता को मिटाना है। मेरा जो काम चल रहा है, उसमें सिर्फ जमीन मांगने की बात नहीं है, मैं उससे एक दर्शन कराना चाहता हूं। जो भगवान की देन हैं, वह सबके लिए है। "तेन त्यक्तेन भुंजीथाः" यह महान मन्त्र है। इसे समझना जरूरी है। मेरा विश्वास है कि हिन्दुस्तान की इस भूमि में ऐसे पुण्य के कण पड़े हैं और यहां की हवा में ऐसी पवित्रता है कि हम जो समझाते हैं, उसको लोग समझ लेते हैं। कई लोग कहते हैं कि इससे तो थोड़ी सी जमीन मिल सकती है, लेकिन सवाल कैसे हल हो सकता है? लेकिन इसी हिन्दुस्तान में एक आया और उसने सारे समाज को बदल दिया। बुद्ध भगवान का इतिहास कह रहा है कि उनका समाज पर कितना असर हुआ था। अशोक तो बुद्ध के चरणों का रज था। उसने प्रेम की सत्ता बताई। लेकिन उसे भगवानके चरणों से ही स्फूर्ति मिली थी। बुद्ध भी एक व्यक्ति थे, जिन्होंने राज छोड़ कर तपस्या की और यह सिद्ध कर दिया कि वैर से वैर शान्त नहीं होता, बल्कि प्रेम से होता है। जब हम इस बात को समझेंगे तभी हमारा उद्धार होगा। यह बात जब से भारत में चली, तबसे समाज का रूप बदल गया। हिन्दुस्थानने मांसाहार छोड़ दिया। अशोक के जमाने तक बुद्ध का संदेश एशिया भर में पहुंचा हुआ था यह हम आज भी मानते हैं। यहांके लोग बाहर देशोंमें गए हैं, शस्त्र लेकर नहीं, बल्कि शान्ति के दूत और सैनिक बन कर गये हैं। हमने प्रेम से दुनियां का रूप बदल दिया। हमने आज अशोक का चिन्ह अपना लिया—उस पर जो चार सिंह हैं, वे क्या बताते हैं? वे चार सिंह एक साथ जुड़े हुए हैं, यद्यपि चार दिशाओं की ओर देखते हैं। चार सिंहों को इकट्ठे बैठा हुआ कभी किसी ने देखा है? सिंह तो हिंसा करने वाला है। उसमें मिलनकी शक्ति नहीं है, हिंसा की शक्ति है। परन्तु उन चार सिंहों

यदि हम एकत्र रखें, तो देश को बलवान बनायेंगे। फिर यह देश अकेला नहीं रहेगा। सबके सब गरीब और अमीर एक संघ में रहेंगे। बहादुरी तो सिंह सी होगी, लेकिन मेल मिलाप की वृत्ति गाय की सी होगी। यही अहिंसा का दर्शन है। आप निराश क्यों होते हैं ? लोगों की सद्‌भावना मिल सकती है। जब मैंने इस काम को उठाया था तब कोई नहीं सोचता था कि इसमें सफलता मिलेगी। मैं तो पागल कहा जाता था। लेकिन आज लोग इस काम को समझ रहे हैं। दो हजार साल बाद आपको मौका मिला है, तो उतावली से काम नहीं करना चाहिए। अहिंसा और प्रेम से अधिक नजदीक का रास्ता दुनिया के लिये दूसरा कोई नहीं है। हमने इस बारे में प्रयोग किये हैं। दुनिया में दो महायुद्ध हुए, जिनमें असंख्य व्यक्तियों का संहार हुआ। लेकिन उससे कोई मसला हल नहीं हुआ, बल्कि नये मसले पैदा हुए। हिंसा से क्या हो सकता है, यह हमने देखा है। तो अब हमें लोक-संग्रह करना चाहिये। करके सब की शक्ति जाग्रत करनी चाहिये। सब के हृदय में जो आंतरिक भगवान् हैं वे जाग्रत हो सकते हैं, ऐसा विश्वास रखना चाहिये। इससे मेरा तो उत्साह बढ़ता है। हम जो आखिर की चीज चाहते हैं, वह होकर ही रहेगी, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है। हिन्दुस्थान की शक्ति जाग्रत हो रही है। मुझे तो अंधे ने भी दान दिया है। यह प्रेरणा कहां से आयी ? उस समय मैं एक छोटे से गांव में था और शाम की प्रार्थना-सभा में अपने विचार समझाये थे। वहां से चार मील दूर से रामचरण नाम का एक अंधा आया; जिसने मुझे राम के चरणों का दर्शन कराया। वह रात को १२ बजे आया और दान देकर चला गया। उस अंधे को क्या दर्शन हुआ था, जिससे कि वह दान देने आ सका। यह सब आपको बता रहा है कि हिन्दुस्थान जाग रहा है। यहां नया विचार, नई भावना आ रही है।

अक्सर यह आक्षेप उठाया जाता है कि मेरे इस काम से गरीबों की शक्ति कैसे बढ़ेगी? मैं उन गरीबों का प्रतिनिधि हूं और उनका हक सबके सामने रख रहा हूं। हवा और पानी के समान जमीन सबकी है, भूमि-माता पर सब संतानों का समान हक है। यदि आप किसी प्यासे को पानी नहीं पिलाते हों तो यह अधर्म है, ऐसा मैं सबको समझाता हूं। इससे गरीबों की शक्ति बढ़ती है या नहीं? आज तक मुझे कोई भी शख्स ऐसा नहीं मिला, जिसने यह कहा हो कि भूमिदान नहीं देना चाहिये। यदि विचार को मंजूर करते हुए भी कोई लाचारी से नहीं देता है, तो वह अलग बात है। मेरा विश्वास है कि भारत में नई क्रान्तियां उठ रही हैं और देखते देखते ही सारे लोग जाग जायेंगे। छान्दोग्य-उपनिषद् में गुरू शिष्य को कहता है कि छोटे बीज के टुकड़े करो और फिर गुरू कहता है, कि जो अत्यन्त सूक्ष्म है, जिसे हम देख नहीं सकते, वही परमेश्वर है, अणिमा है। वही तेरा स्वरूप है। तत्वमसि। उसी से यह विशाल वृक्ष पैदा हुआ है। इस विशाल वट-वृक्ष के बीज वहीं छिपे हुए हैं। वैसे ही हरेक के हृदय में जो बीज है, उसे आज पानी मिल रहा है, इसी से वह वृक्ष बढ़ेगा। मैं तो दुबला-पतला आदमी हूं। लेकिन मैं उसी की शक्ति से, अपने में ताकत पाता हूं मेरी हड्डियों में ताकत नहीं है। यदि कल खत्म हो जाऊं, तो भी कोई आश्चर्य की बात नहीं होगी। लेकिन फिर भी मैं हर रोज, दस पंद्रह मील थके बिना चल सकता हूं। यह स्फूर्ति मैं कहां से पाता हूं? इसका मतलब यही है कि परमेश्वर जिस काम को चाहता है, उसको करता है। आज वह मेरे जैसे कमजोर व्यक्ति के जरिये वह काम ले रहा है। वह चाहता है तो यह काम होकर ही रहेगा। लोग कहते हैं कि जमीन का मसला हल करने के लिए सत्याग्रह करने की जरूरत है। यदि वैसा मौका आ जाय, तो मैं सत्याग्रह भी करूंगा। भगवान् ने मुझे सत्याग्रह ही सिखाया है और आज भी मैं

वही कर रहा हूं। सत्याग्रह का मतलब है, सत्य को सामने रखना, उसी का आग्रह रखना, उसी के अनुकूल वातावरण पैदा करना तथा सामने वाले के हृदय में प्रवेश करने के लिए अत्यन्त प्रेम से प्रयत्न करना। यह काया-प्रवेश है। इससे सत्याग्रह का वातावरण दूर तक फैलता है। सत्याग्रह की जरूरत हो तो भगवान् मुझसे वह भी करावेगा। इस बारे में जिस भगवान्‌ने मुझे प्रेरणा दी है, वही दूसरों को क्यों नहीं देगा? मन में अहंकार नहीं रखना चाहिये। सब अपने समान हैं, आत्म-स्वरूप हैं, यही मान कर काम करना चाहिये। जो बुद्धि आज है, उसी बुद्धि से सब के हृदय में प्रवेश करना होगा। अब तो सारी भूमि मेरे पास आ चुकी है, सिर्फ बाहर से आने के लिए समय का सवाल है। जमीन का सवाल हल होगा ही, क्योंकि यह काल पुरुष की मांग है। भगवान् अपना काम कर रहे हैं। हमें ऐसी रचना करनी है कि सबकी शक्तियां समाज-सेवा में लग जांय और सब अहंकार छोड़ दें। यही सवा-धर्म सिखाना है। यह यह समस्या हल करोगे तो बाकी भी सब समस्यायें हल होंगी।

हमारे पूर्वजों ने मुक्ति की जो व्याख्या की थी, उसी अर्थ से हमें अपने देश को मुक्त करना है। स्वराज्य तो आ गया, लेकिन सामाजिक-मुक्ति आने को है। हमें मुक्ति की हवा फैलानी चाहिये।

लोग पूछते हैं कि भूमि का वितरण कैसे होगा? छोटे-छोटे टुकड़े होने पर एकोनामिक होल्डिंग्स नहीं रहेंगे। श्री पाटिल ने यही सवाल उठाया। मैं यह कहना चाहता हू कि पाटिल हमारे मित्र हैं और भूमि-दान-यज्ञ के प्रति सहानुभूति रखते हैं। उन्होंने अपनी बहुत सी भूमि हमें दी है, यह बड़ी बात है। 'एकोनोमिक होल्डिंग' का यह जो सवाल उठाया जाता है, उसके बारे में मेरा कहना यह है कि छोटे छोटे टुकड़े होने पर भी, किसान आपस में आवश्यकता के अनुसार सहयोग कर सकते हैं। उत्तर प्रदेश की सरकार कहती है कि सवा छः एकड़ का एको-

नोमिक होल्डिंग बन सकता है। मैं तो हर परिवार को पांच एकड़ देता हूं। वितरण खानगी तौर से नहीं, बल्कि सार्वजनिक सभा में होगा। सबकी सलाह लेकर जो सबसे काबिल होंगे, उन्हीं भूमिहीनों को जमीन दी जायगी। हर कोई दान का हकदार है यह मानकर उसे उसका हक दिया जायगा। कम से कम हरेक गांव में एक सर्वोदय परिवार बसाया जाना चाहिये? लोग पूछते हैं कि क्या हर गांव से पांच एकड़ लेने से शान्ति होगी? लेकिन मैं कहता हूं कि गांव में एक घर से दूसरा घर जुड़ा रहता है। एक घर में आग लग जाने से सारा गांव जल जाता है। एक परिवार में विचारके निर्मित होने से सारे गांव में फैल जाता है। इससे समस्या हल हो नहीं सकती है। लेकिन इसका मतलब यह है कि हमने अभी एक कदम ही उठाया है। आगे भी बहुत कुछ करना है।

आपको मैं यह समझाने आया हूं कि आप तुच्छ नहीं हैं। आप महान् हैं। हम सब महान् हैं। मैं किसी की भी इज्जत घटाना नहीं चाहता हूं, बल्कि सबकी इज्जत बढ़ाना चाहता हूं। यह हिन्दुस्तान देश दस हजार साल का पुराना देश है। यहां कई सामाजिक परिवर्तन हो चुके हैं और कई महापुरुष पैदा हुए हैं। मैं सबको बताना चाहता हूं कि सब महान हैं। तुम्हारी हालत दुनिया देख रही है। हम बच्चे बच्चे को यह समझाना चाहते हैं। तू देह नहीं है, तू ब्रह्म है। देह तो चोला है। तू देहसे भिन्न है। देह को कोई धमकाये तो डरना नहीं। जुल्मी लोग शरीर को तकलीफ देकर अपनी सत्ता कायम करते हैं। परन्तु वे चाहे तुझे पीटें या मारें, तो भी तुम उनकी चीज मत मानना। हम शरीर से भिन्न हैं। बच्चों को मारना, डराना, धमकाना, बिल्कुल गलत है। क्योंकि बच्चा भी महान् है वह तुच्छ नहीं है। वह पूर्ण है, यह पूर्ण है। कोई अपूर्ण नहीं है। मैं सबको प्रतिष्ठा देना चाहता हूं; और सिखाना चाहता हूं जिससे वे निर्भयता से आगे बढ़ सकें। यह तभी

हो सकता है जब हम सबको यह समझायेंगे कि हम सब परिपूर्ण हैं। मैं मिष्ठान देना चाहता हूं। छोटा बच्चा आधा लड्डू नहीं चाहता है, वह तो पूरा लड्डू चाहता है, चाहे उसे छोटा लड्डू ही क्यों न दिया जाय वह मन में सोच लेता है "मैं छोटा हूं, इसलिए मुझे छोटा लड्डू मिला तो कोई हर्ज नहीं है" लेकिन वह आधा लड्डू कभी नहीं लेता है। वह सोचता है "मैं पूरा हूं। अधूरा नहीं हूं।" वह अपूर्णता को सहन नहीं कर सकता। हम छोटे बड़े सब पूर्ण हैं।

छोटे बड़े सभी काश्तकार और मजदूर अपना अपना हिस्सा इस यज्ञ में दें। सबोंको आत्मरूप माना तो, जो मांगेगा उसे देना ही पड़ेगा। जब आप यह मानते हैं कि वह अलग है और आप अलग हैं, तब विरोध पैदा होता है। परन्तु दोनों एक रूप हैं, यह मानें तो कोई कुछ भी मांगे, हम दिये बगैर नहीं रहेंगे।

भारत दुनियां को बचायेगा। हमारी आवाज, आज दुनिया में पहुंच सकती है तो यदि हम इस काम को पूरा करेंगे तो हमारे पास दुनियां का नेतृत्व आयेगा। मनु ने कहा है कि पृथ्वी के सारे मानव इस भारत के सज्जनों के चरित्र सीखेंगे, यहां से विचार लेंगे। यह मनु का भविष्य कथन होकर ही रहेगा।

पड़ाव—कानपुर
१३-५-५२.

(५)

आपके गांव में अनेक गांवों से लोग आये हुये हैं और बहुत आशा से आये हैं। ये बिचारी स्त्रियां मेरा व्याख्यान क्या समझेंगी, फिर भी वे बहुत आशा-विश्वास रख कर यहां आई हैं और खूब उत्सुकता से यहां बैठी हैं। उनको यही लगता है कि कोई जमीन देनेवाले भगवान का दूत

आया है, तो पहली बात तो वे यही जानना चाहेंगी कि गरीबों को आज कितनी जमीन देनेवाला हूं।

आज गरीबों के लिए कुल ७६ एकड़ जमीन मिली है। मैं दो भगवानों के बीच दूत खड़ा हूं। जैसे नदी के दो किनारों का सम्बन्ध पुल जोड़ता है, वैसे ही मैं दोनों के बीच का पुल हूं। मैं देनेवाले और लेनेवाले का जोड़ जुड़ानेवाला खड़ा हूं। अगर मैं गरीबों को किसी रोज कम देता हूं तो मेरी जिम्मेदारी नहीं है और किसी रोज ज्यादा देता हूं तो वह भी मेरी जिम्मेदारी नहीं है। मुझे कोई पाप नहीं लगता, पुण्य नहीं लगता। मुझे तो लगता है, ये सारे पाप-पुण्य छोड़ करके मैं सीधा भगवान के पास पहुँच जानेवाला हूं। लेकिन मैं चाहता हूं कि दुनियां में पुण्य बढ़े। आज यहां जो ७६ एकड़ जमीन मिली है, वह छोटी बात नहीं है।

आज तक गरीबों को किसी ने भूमिदान दिया था? आज तक जो भी कोशिश करते थे २,४,६ एकड़ जमीन छीन लेने की बात चलती थी। लेकिन आज एक नयी हवा शुरू हुई है। अब तो लोगों ने देना शुरू कर दिया है। तो आज यह खुश खबरी है कि गरीबों को ७६ एकड़ जमीन दान में मिली है। यदि एक एकड़ की कीमत पांच सौ रुपये समझें तो यह दान हजार रुपयों का है।

मैंने सुना है अभी नजदीक के एक गांव कोंबटीकुंटपल्ली में साहुकार के घर, डाका पड़ा था। कोंबटीकुंटा याने साहुकारों का कुंटा, और सुनते हैं कोई १०, २० लोग आए थे। हाथ में बन्दूक लेकर और वह भी रात को ९ के बाद आए थे। मुझे ब्राह्मणों ने कहा कि अमावस्या का दिन आने के लिए चुना था; और किसी के घर से कुछ सोना लूट कर ले गए। मैं नहीं जानता हूं कि वह सोना कितने का था। पता नहीं वह अट्ठाईस हजार का था या नहीं लेकिन आज

हम ने ३८ हजार की जमीन दिन दहाड़े डाका डाल कर ले ली है। इसे लेने के लिए हमारे हाथ में न कोई बंदूक थी, न हमने किसी पर जबर-दस्ती की। हमको इसे लेने के लिए न अमावस्या ही खोजनी पड़ी। हमने वह प्रेम से ली है और देने वाले ने भी प्रेम से दी है, इसमें किसी को दुःख नहीं हुआ, आनन्द ही हुआ है। आप लोगों को मुझे कहना है कि दुनिया में काम करने का तरीका यही है। यदि कम्युनिस्टों ने आप लोगों को जमीन देने का कोई वचन दिया है, कोई वादा किया है तो वे वचन को पूरा करने वाले नहीं है। आप देखते हैं, उन्होंने ४-५ साल तक मेहनत की लेकिन आखिरकार उनको भागना पड़ा पहाड़ों में, जगलों में, और छाती पर पुलिस आ बैठी। हम तो कम्युनिस्टों को बहुत प्रेमपूर्वक समझाना चाहते हैं कि भाइयो! यह रास्ता छोड़ दो। इस रास्ते से गरीबों का कल्याण होने वाला नहीं है। वे उल्टे ज्यादा पीछे जायेंगे। मैंने कम्युनिस्टों को समझाने की कोशिश की। अगर यहा कोई ऐसे लोग हों, जो मेरी बात उनके कानों तक पहुचा सकते हों, तो पहुचा दें।

आज यहां के लोगों ने ठीक दान दिया है। यह बड़ा गाव नहीं है तो भी ठीक दिया है। इसमें गरीबों ने दिया, बीचवालों ने दिया और श्रीमानों ने दिया। एक भाई ने जो बिलकुल गरीब हैं २ गुंठे दिया। ज्यादा से ज्यादा देनेवाले ने ५० एकड़ दिए हैं, तो इसका मतलब यह हुआ कि बिलकुल गरीब ने भी दिया और श्रीमान ने भी दिया। इससे आप समझ लेगे कि हवा बदल रही है।

मै खास कर स्त्रियों को समझाना चाहता हू कि आप समझ लीजिए कि कम्युनिस्टों के रास्ते से जाने में लाभ नहीं हैं। अगर आपके भाई, पति, लड़के उसमें हैं तो उनको समझाना चाहिए, अगर वे नहीं समझते हैं तो विरोध में फाका करना चाहिए सत्याग्रह करना चाहिए। ऐसा आप करेंगी तो आपका यह मुल्क सुखी होगा।

अब देखिए जब श्रीमान लोग भूमिदान देने लगे, वो उनके मन में गरीबों के प्रति प्रेम पैदा हुआ। मेरे इस प्रवास में मुझे श्रीमानों ने बहुत दिया है, लेकिन उनके दान से मैं तृप्त नहीं हुआ हूं, क्योंकि मैं सिर्फ दान नहीं चाहता हूं। आज एक भाई के घर में हम ठहरे हैं। उसका घर हमारे लिए बिलकुल खाली है। इसका कारण क्या है ? कारण यह है कि वह भाई यहां नहीं रहता। यहां रहने से डरता है और शहर में रहने गया है। मैं तब तक सन्तुष्ट नहीं हूंगा, जब तक वे मेरा सदेश नहीं समझते और गांव में रहने के लिये वापस नहीं आते हैं। जब तक आप लोग प्रेम से उनको गांव में लाते नहीं हैं, तब तक मैं आपको पास नहीं करता हूं। आप लोग समझें कि मैं सर्वोदय वाला हूं। मुझे सबके बीच में प्रेम पैदा करना है। मैं गरीब को गरीब नहीं समझता। श्रीमान को श्रीमान नहीं समझता। मैं तो दोनों को इन्सान समझता हूं। दोनों को परमेश्वर रूप वाला समझता हूं। अभी कुछ लोग ऐसे सोचने लगे हैं कि देशमुखों को—खतम करना चाहिये। यह ठीक नहीं है। कहते हैं, अहिरावण महिरावण को जब खतम किया गया, तब उनके खून की बून्दों से असंख्य अहिरावण महिरावण पैदा हुए थे। इस तरह एक देशमुख को खतम करते हैं तो दूसरा नया देशमुख तैयार होता है। इस प्रकार खतम करना क्रूरता है। उस देशमुख की जगह को दूसरा एक गरीब लेता है और वह फिर देशमुख बनता है। इस तरह ये देशमुख खतम होने वाले नहीं हैं।

आप लोगों को, जो यहां से गांव छोड़ कर भाग गये हैं, उनको फिर से वापस लाना चाहिये। वे बुरे हैं या अच्छे हैं, फिर भी अपने ही गांव के हैं। आप उन्हे प्रेम से वापस लायेंगे, तब मैं समझूंगा कि आपकी परीक्षा ठीक हुई। उनकी जान पर कोई खतरा नहीं है, यह

आपको साबित करना होगा। जब उनको यह मालूम होगा कि इस गांवमें अब खतरा नहीं है, तो वे वापस आ ही जायेंगे। लेकिन यह दोनों ओर से होना चाहिये। यानी उनको हिम्मत करनी चाहिये और आपको प्रेम - भाव से उनको बुलाना चाहिये। इस तरह होगा, तो गांव का काम अच्छा होगा।

लेकिन जो भाई शहर में जाकर रहता है और मुझे दान देता है उससे मैं अधिक मांगता हूं। उनके बालबच्चे भी गांव में शामिल हैं। इस गांव के बच्चे, इस गांव की बहनें उनके घर की ही हैं। उनको अपना कुटुम्ब बड़ा करना है, आज उनके कुटुम्ब में २-४ बच्चे होंगे पत्नी होगी। अब उनका कुटुम्ब २-२ हजार का बनना चाहिये। अगर ऐसा वे कर सके, तो उनका आनन्द घटेगा नहीं, बढ़ेगा ही।

मैं श्रीमानों से जमीन ले रहा हूं, लेकिन फिक्र हो रही है कि इसको आगे कैसे बढ़ाऊँगा। मैं चाहता हूं कि ये सारे श्रीमान गरीबों की सेवा में लग जांय, और मैं अनुभव से कहता हूं कि सेवा से बढ़कर दूसरा मेवा नहीं है। इसे वे चखें। उनको भगवान ने संपत्ति दी है, वह किस लिये दी है ? यह तो मैं श्रीमानों से पूछना चाहता हूं।

मैं गरीबों से यह चाहता हूं कि वे अपने कुटुम्ब के बाहर सोचने लगें। हम गरीब हैं, तो हम से भी ज्यादा गरीब दुनियां में है, उनकी मदद करना हमारा कर्तव्य है। मजदूर ईमानदारी से काम करेंगे, तो उनकी कीमत बढ़ेगी। आजकल हम श्रीमानों को व्याख्यान देते हैं तो क्या गरीबों को सद्गुण के पुतले मानते हैं। हरेक में जो दुर्गुण हैं वह बताना चाहिये और उसे निकालने की कोशिश करनी चाहिये। मराठी में एक म्हावत है, "ताली एक हाथ से नहीं बजती है, दो हाथों से बजती है।" श्रीमान और गरीब दोनों ने यह काम बिगाड़ा है। इस वास्ते मुझे दोनों

को सुधारना है और दोनों में प्रेम संबंध जोड़ना है। इसलिये जो हवा बदल रही है उसे आगे ले आइये। जिन्होंने आज थोड़ा भूमि-दान दिया है, उन्होंने गरीबों की सेवा का व्रत लिया है उनको जीवन में कुछ न कुछ सेवा करनी ही है। जमीनमें बीज बोते हैं, तो उसको पानी देते हैं। यह जो व्रत लिया है, उसको निरंतर पानी देते रहिये। आपके हृदय में भी परमेश्वर रहताहै, यह नहीं कि वह केवल कैलाश में या वैकुण्ठ में रहता है, वह हर जगह रहता है। लेकिन हमारे हृदय में उसका विशेष स्थान है। यह हृदय यदि स्वच्छ है, तो उसका स्थान यहाँ भी है। इसलिये काम, क्रोध, मोह, लोभ छोड़ो, परनिंदा छोड़ो। स्त्री और परधन की अभिलाषा छोड़ो। शराब का व्यसन छोड़ो।

—मुक्तपाल
२६-५-५२

(६)

जो देश दूसरे देशों के अधीन होता है, उसके लिये तो यही एक कर्तव्य होता है कि वह आजादी हासिल करे। परतन्त्र-व्यक्ति के लिये कोई धर्म और कोई विधि है ही नहीं। इसलिये अब हम एक नैतिक-भूमिका पर आ गये हैं। इसके पहले हमारे लिये कोई नीति ही नहीं थी; अब हम अपनी हालत को सुधार सकते हैं और अपने को चाहे जो रूप दे सकते हैं। इसलिये आज तो सबमें उत्साह होना चाहिये; क्योंकि हमारे लिये कर्तव्य का एक विस्तृत क्षेत्र खुल गया है। हमारे नौजवान खुद को भाग्यवान समझें, क्योंकि उन्हें अपने देश की नवचेतना को प्रकट करने का मौका मिला है। हमारे समाज के जीवन के परिवर्तन का मसला आज हमारे सामने है। व्यक्ति के जीवन में परिवर्तन लाये बिना समाज में परिवर्तन नहीं हो सकता है। हमने भूल का

मसला हाथ में लिया है, क्योंकि वह अहम मसला है। "और भी दूसरे दुख पड़े हुए हैं" ऐसा जब कई लोग मुझे सुनाते हैं, तब मैं कहता हूँ कि हम बुनियाद इसीलिये बना रहे हैं कि उस पर मकान भी बनने वाला है। तुलसीदास जी ने लिखा था "एकै साधे सब सधे।" देश भर के सोचनेवालों की शक्ति अब हमें केन्द्रित करनी है। उसी तरह शक्ति का केन्द्रिय-करण हो, तो देश का रूप बदल जायगा। उत्तर प्रदेश की सरकार ने जमींदारी रद्द करने का कदम उठाया है, वह अच्छा है। जमींदारों ने बयान दिया था कि अब उन्हें उस कानून के अनुकूल बनना है और उसमें सहयोग देना है। उन्होंने भी मेरा स्वागत किया है।

"नई रचना आ रही है और पुरानी बदल रही है; इसलिये हमें उसके अनुकूल बनना है" यह जमींदारों ने जब कहा तब मुझे बहुत खुशी हुई। जब जनता बच्चे जैसी थी तब इन्तजाम करने के लिये इन लोगों के पास जमीन गयी थी। लेकिन अब बच्चा समझदार हो गया है। इसलिये मैं प्रेम से मांगता हूं और वे देते हैं। मैं मानता हूं कि जो तुम्हारे पास अच्छी चीज है, वह देनी चाहिये। मैं मुआवजे का दान भी मांगता हूं। किसी एक ने मुझसे कहा कि अब हमारी जमीन तो गयी और अब इस दुखी हालत में आप और भी मांगते हैं। लेकिन जो लोग सुख को दुख समझते हैं, उनका समझना गलत है। जो सारे समाज के लिये आनन्द की बात है, वह जमींदारों के लिये भी आनन्द की बात होनी चाहिये। मैं जो कुछ कहता हूं वह जमींदारों के हित की बात है। इस विचार से सारे समाज में हम एकता ला सकते हैं। वैर-भाव लाये बगैर मित्रता ला सकते हैं। गीता कहती है कि एक दूसरे की सेवा करो। समाज में वर्ग है और उनमें संघर्ष है, यह सोचने का ढंग ही गलत है। उपनिषदों ने कहा है कि

"समाज में भेद है ही नहीं।" मैं सबको हित समझाता हूं। तुम्हारा हित दूसरे के हित में है। तुम्हारे गांव में लोग भूमिहीन हैं और तुम्हारे पास जमीन पड़ी है तो उन्हें जमीन देने में दोनों का भला है। यदि इस बात को नहीं समझे, तो दुख की मिथ्या कल्पना कर लेते हो। जो लोग मानते हैं। कि मजदूर और मालिक, जमींदार और किसानके हित परस्पर विरोधी हैं, उनको यह भी मानना पड़ेगा कि माता - पिता और बालक, पति और पत्नी, गुरु और शिष्य उनके हित में भी विरोध है। लेकिन यह असंभव है।

हमारा काम है सारे समाज की रचना बदलना। इसमें छोटे छोटे सवाल नहीं उठाने चाहिये। यह क्रांति का काम है। इसलिये व्यापक दृष्टि से देखो। दूसरे देशों में यह सवाल कैसे हल किया गया है यह देखो। वहां तो खून की नदियां बहाई गयीं थीं। उस दृष्टि से हमने क्या किया है; यह देखो। आखिर मैं कहता क्या हूं? मैं तो सब जमीन नहीं मांगता हूं; केवल छठा हिस्सा मांगता हूं। मैं कुटुम्ब-भावना को व्यापक बनाना चाहता हूं। समाज को कुटुम्ब बनाना चाहता हूं। मैं सब पक्षों से कहता हूं कि तुम जरा दूर दृष्टि से देखो। देश में सेवा करने वालों का एक ही पक्ष होना चाहिये। सब लोगों को हित की दृष्टि से देखना चाहिये और अपने छोटे-छोटे विचारों को छोड़ देना चाहिये।

मुझे खुशी होती है कि भूदान-यज्ञ का चमत्कार देख कर सब पक्षों ने इस काम के प्रति सहानुभूति प्रकट की है। कल मैंने अखबार में पढ़ा कि कांग्रेस के जेनरल सेक्रेटरी श्री लाल बहादुर शास्त्री ने सब कांग्रेस वालों को हिदायत दी है कि इस काम में सबको मदद देनी चाहिये। सोशलिस्ट, राष्ट्रिय स्वयंसेवक संघ, कृषक-मजदूर-प्रजा-पार्टी, आदि सभी पार्टियों ने मुझे सहायता दी है। मैं ने आज यह चर्चा सुनी कि कृषक-मजदूर-प्रजा-पार्टी और

सोशलिस्ट एक हो रहे हैं। ऐसा होगा तो बहुत खुशी की बात होगी। जो चार के तीन, तीन के दो और दो के एक बनाते हैं, वे धन्यवाद के पात्र हैं। सांख्य ने यह बात हजारों साल पहले कही थी कि सारी सृष्टि त्रिगुणात्मक है। जब मैंने यह देखा तब मैंने सोचा कि मैं सब संस्थाओं से अलग हो जाऊं। वैसे हरेक संस्था कुछ न कुछ भलाई का काम कर सकती है। लेकिन मुझे लगा कि अहिंसा का विकास करना है, तो सबसे अलग होकर तटस्थ बनना जरूरी है। मैंने यह बात बापूजी से कही थी और इजाजत मांगी थी। जब उन्होंने इजाजत दी, तब मैं सब संस्थाओं से अलग हो गया। जब मैं सब पार्टीवालों को एक दूसरे की निन्दा करते देखता हूं, तो मैं उनसे कहता हूं कि आप एक दूसरे की निन्दा करते है परन्तु जनता तो सब की निन्दा सुन लेती है। हिन्दुस्तान एक बड़ा देश है। यहां सिर्फ एकता स्थापित की जाय, तो यह देश बहुत बड़ा देश बन सकता है; क्योंकि कुदरत ने ही इसे बड़ा बनाया है। पर हम आज भेद बढ़ा कर उसकी शक्ति क्षीण कर रहे हैं।

गीता में कहा है कि इस दुनिया में अनेक प्रकार के भेद दीख पड़ते हैं, लेकिन उनमें एकता देखनी ही सात्विक-ज्ञान है। भेदों को बढ़ाना रजोगुण का काम है, और अभेद प्रकट करना, भेद में अभेद देखना सत्वगुण का काम है। आज हम केवल भेद ही देखते हैं। लेकिन दृष्टि व्यापक बनायेंगे, तो भेद मिट जायेंगे। इसलिये सब पार्टीवालों को निमन्त्रण है कि सब आयें और इस काम में लग जायें। हरेक को शंका का अधिकार है, पर काम करते-करते शंका करनी चाहिये।

आज विदेश के लोग देख रहे हैं कि यह क्या चमत्कार है। यह तो भारत का ही चमत्कार हो सकता है। हमारे पूर्वजों ने कहा है कि "दुर्लभम् भारते जन्म, मानुषी तत्र दुर्लभा।" इस भूमि में इतने पुण्य कार्य हो गए हैं कि यहां की मिट्टी के कण-कण में पुण्य भरा हुआ है।

वही भारतीय आत्मा की प्रेरणा मुझे और आपको प्रेरणा दे रही है। इसीलिये आप लोग सब भेद भूल कर एक दूसरे को गले लगायें।

आखिर मैं संशय किसके बारे में रखूँ। क्या कृपलानी के बारे में रखूँ; जिन्हों ने अपनी सारी जिन्दगी रचनात्मक कार्य करने में बिताई है, क्या जयप्रकाश के बारे में संशय रखूं, जिन्हों ने तीस साल से अपना तन-मन-धन देश-सेवा में अर्पित किया है, क्या जवाहर लाल जी के बारे में संशय रखूं; जो दिन-रात देश के बारे में सोचते हैं। आखिर मैं किसके बारे में संशय रखूं। मैं तो संशय नहीं विश्वास ही रख सकता हूं। इसीलिये सब लोग मुझ पर विश्वास रखते हैं। क्योंकि दुनिया में हम जो देते हैं वही पाते हैं।

मैं विचारों का मंथन चाहता हूं, परन्तु यह चाहता हूं कि आचार एक हो, मैं हरेक की अलग-अलग अकल चाहता हूं। मैं अनेक बुद्धियों का मथन चाहता हूं, परन्तु सब बुद्धियों का योग करके एक काम में जुटा देना चाहता हूं, क्योंकि उससे शक्ति पैदा होती है। इसीलिये जब पाटिल ने वितरण का सवाल उठाया, तब मुझे आनन्द हुआ। लोग बेवकूफ हैं, जो समझते हैं कि पाटिल ने मेरा विरोध किया। वे तो आचार से मेरे साथ हैं, क्योंकि उन्हों ने मुझे जमीन दी है। मैं चाहता हूं कि हरेक गांव में मेरा संदेश पहुँच जाय। इससे हवा दूर फैल जाती है। फिर आगे का काम तो हवा ही करती है।

जनता भगवान का रूप है। जनता के संपर्क से ही हम श्रद्धावान बनेंगे। आज हम श्रद्धाहीन हो गये हैं; इसलिये हमें जनता के पास जाना चाहिये। अगर एक साल पहले मैंने देश के विद्वानों की एक मीटिंग बुलाकर, 'उनके सामने अपनी भूमिदान की यह बात रखी होती, तो वे कहते 'तू पागल है।'

लोगों के मन में मेरे इस काम के प्रति पहले अश्रद्धा थी, लेकिन फिर लोग कौतुक से मेरा काम देखने लगे और अब श्रद्धा होने लगी है तथा यह विश्वास प्रकट होने लगा है कि स्वराज्य हासिल करने में हमने जिस तरह एक नया तरीका बतलाया, वैसे ही यह मसला हल करने में हम एक नया तरीका बता सकते हैं। मुझे नम्रता से काम शुरू करना चाहिये। पुरुषार्थ से आगे बढ़ना चाहिये। पहले लोगों का आशिर्वाद मिलता है और उसके बाद सहयोग।

आपकी और मेरी मुलाकात सदा कायम है; क्योंकि आत्मा में हम सब मिले हुए हैं। हमारा किसी से भी वियोग नहीं हो सकता है। मेरा तो सबके साथ निरंतर योग ही है। मैं योगी हूँ, वियोगी नहीं। आपके साथ मेरे दिल का योग है। मैंने इसीलिये दिल खोलकर आपके सामने यह सब कहा है। मुझे लगता है कि मैं वर्धा में अपने आश्रमवासियों के सामने ही बोल रहा हूँ।

पड़ाव—फतेहपुर
१०-६-५२

७

कल मैंने कहा था कि "कि दो हजार वर्षों के बाद हमें एक ऐसा मौका मिल रहा है, जब कि हम समाज की नये सिरे से रचना कर सकते हैं। इसलिये हमें शान्ति से सोचना है और सोच कर कदम उठाना है। बिना सोचे कदम उठाया तो जो अवसर हमें मिला हो उसका उपयोग हमने नहीं किया, ऐसा कहा जायगा। समाज रचना में मैं जो चाहता हूँ, वह आरम्भ में कह दूंगा।"

आज कल सब कहते हैं कि देश की उपज बढ़ानी चाहिए। यही देश एक जमाने में अत्यन्त सम्पत्तिमान देश था। वह जमाना पुराना

नहीं है, बल्कि तीन सौ चार सौ साल पहले की बात है। वही देश आज पृथ्वी पर के अत्यन्त दरिद्र देशों में शुमार है। तो हमें सोचना है कि उत्पादन बढ़ाने के लिये हमें क्या करना चाहिए ? वैज्ञानिक साधनों का हम उपयोग तो कर सकते हैं लेकिन अपनी मर्यादायें पहचान कर। उत्पादन तब बढ़ेगा, जब सब लोग उस बारे में अपने कर्त्तव्य को महसूस करेंगे। सिर्फ व्याख्यान देने से कौन उत्पादन बढ़ायेगा। खेती करने वालों को उत्पादन बढ़ाने के लिये कहा जाता है, परन्तु क्या इसमें हमारा कुछ कर्त्तव्य नहीं है ? हमें भी उसमें हिस्सा लेना चाहिए। रवि ठाकुर ने कहा है कि इस देश में हर कोई खाने में हिस्सा लेता है, इस लिए विभाजन होता है। परन्तु उत्पादन में हिस्सा नहीं लेता है इसलिए गुणा नहीं होता है। उत्पादन करना हरेक की जिम्मेदारी है, हरेक का धर्म है। इस बात को हमें समझना चाहिए। आज बाहर से अनाज मंगाया जा रहा है। कुछ साल पहले औसत १७ गज कपड़ा बनता था। लेकिन आज सिर्फ ११॥ गज बनता है और हड़ताल वगैरह हो तो ११ गज बनता है। हमें कपड़ा भी चाहिए। दूध तो हमारे देश में इतना कम है कि केवल नाम-मात्र का है। गाय, बकरी और भैंस सब लेकर हरेक आदमी के लिए सिर्फ १२॥ तोला दूध पड़ता है। और इसी में से मिठाई भी बनती है। इतने कम दूध में देश बलवान नहीं बन सकता। फल और तरकारी बहुत कम पैदा होती है और उससे भी कम खाई जाती है। इसलिए हमें हर तरह से उत्पादन बढ़ाना है। हमारे घर भी बहुत खराब हालत में हैं। मनुष्य की आवश्यकता की जितनी बातें हैं, उन सब की इस देश में कमी है। हरेक का यह नित्य कर्त्तव्य होना चाहिए कि कुछ न कुछ काम किए बगैर नहीं खाये। वकील, डाक्टर, न्यायाधीश, मन्त्री, लश्कर, पुलिस के अधिकारी, शिक्षक आदि सब अपना काम करते हैं, देश की सेवा तो करते हैं, लेकिन उत्प

दन बढ़ाने में सबको हाथ बटाना चाहिए। खाना तो सबको पड़ता है, लेकिन जो खाते हैं, उन्हें कम से कम एक घंटा उत्पादन बढ़ाने का काम करना चाहिए। व्यायाम के जो प्रयोग होते हैं, वे सब अच्छे हैं। उनसे हमें खुशी होती है, क्योंकि उनसे शरीर की शक्ति बढ़ती है, पर व्यायाम के साथ साथ उत्पादन भी हो तो शक्ति के साथ देश को मदद भी पहुँचाई जा सकती है। उत्पादन से मुक्त कौन रहेंगे? प्रोफेसर, विद्यार्थी, छोटे बच्चे, बूढ़े, वकील, व्यापारी, न्यायाधीश, बौद्धिक काम करने वाले, भक्त, सन्यासी, कवि आदि सब मुक्त हैं; यदि ऐसा माना तो देश का मसला हल नहीं होगा और इस काम के लिए जो भूमिका चाहिए, वह भी उत्पन्न नहीं होगी। हर बच्चा भी थोड़ा सा काम कर सकता है। अन्यथा उसे खाने का हक नहीं है। जब यह होगा तभी तो सच्ची धर्म-प्रतिष्ठा बढ़ेगी। हरेक को धर्म महसूस करना चाहिए। सबको व्रत लेना चाहिए कि कम से कम समय में भी उत्पादन किए बगैर खाना नहीं खायेंगे। इससे परलोक की नहीं, देश की सेवा से-पृथ्वी माता की सेवा करने से, अन्न मद्य पैदा होगा। गांधी जी ने हमें चर्खा चलाना सिखाया। उसका मतलब यह था कि कोई न कोई उत्पादक काम किए बगैर खाना नहीं खायेंगे। इससे व्यायाम तो हो ही जाता है और अच्छी तालीम भी मिलती है। बचपन में हम मां से खाना मांगते थे, तो वह कहती थी कि तुलसी में पानी दो फिर खाना खाओ। वह धर्म की तालीम थी, उसी तरह आज राष्ट्र धर्म की तालीम देनी चाहिए। यदि चर्खा चला कर या सब्जी तरकारी पैदा करके कोई उत्पादन नहीं किया, तो खाने का हक नहीं है। राजेन्द्र बाबू देश का बड़ा भारी काम करते हैं, तो भी नियमितता से सूत कातते हैं। इतना महान् पुरुष यह क्यों कर रहा है? क्योंकि उसने देखा कि देश को संकट से मुक्त करने की जिम्मेवारी उनपर भी है। इसकी शिक्षा सब को देनी चाहिए। एक जमाना था, जब हिन्दुस्तान

में जंगल ही जंगल पड़े थे। उस समय जंगल काटने की जरूरत थी, इसीसे थोड़ा थोड़ा वृक्ष काटेंगे और यज्ञमें समिधा जलायेंगे, यह व्रत सबने लिया था। इससे सब जंगल काटते थे। इसी तरह दंडकारण्य साफ हुआ। जगह जगह और समय समय पर अलग अलग यज्ञ और व्रत की जरूरत होती है। उसके बाद बनने वाली नयी समाज-रचना में उत्पादक काम करने वाला ही खाने का हकदार होता होगा। क्योंकि हरेक को भूख रहती है। विनोबा बौद्धिककाम करता है, तो उसके लिये मानपत्र काफी है। लेकिन उसे खाना भी चाहिये। इसीलिये उसे कुछ काम भी करना होगा। नई समाज रचना की गहरी बुनियाद, राष्ट्रसेवा का यह व्रत बन सकता है। शरीर परिश्रम में व्रत टालने के कारण बहुत सारी मुसीबतें पैदा होती हैं। आज कई लोग दूसरे के श्रम पर जीते हैं। गांधी जी नियमितता से प्रतिदिन सूत कातते थे और आखिरी दिन में सूत कात कर ही वे गये थी। जब वे प्रार्थना की वृत्ति में लगे थे, उसी समय भगवान ने उन्हें अपने पास बुला लिया। उनको दिन-रात असंख्य काम करने पड़ते थे। फिर भी वे बराबर कातते थे। इसीलिए कि हम जैसे बच्चों को तालीम देना चाहते थे कि सौ साल जिन्दा रहो, पर कर्म करते रहो, नहीं तो वह जीवन कलुषित होग। नई समाज रचना का मूल-भूत तत्व है-परिश्रम-निष्ठा। चर्खा-कातना आसान है। शहर में भी लोग इसका उपयोग कर सकते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि सिर्फ चर्खा ही कातना चाहिये। दूसरे भी औजार उठा सकते हैं। चक्की पीसना, बगीचा लगाना इत्यादि कई काम पड़े हैं। इससे श्रम की प्रतिष्ठा सिद्ध होगी। आज कांग्रेस ने अपना सालाना चन्दा एक रुपये से चार आना कर दिया, परन्तु इससे कुछ होने वाला नहीं है। जब तक पैसे के बदले परिश्रम नहीं लेते, तब तक क्रांति नहीं होगी। क्रांति के लिये तो मूल्य बदलने पड़ेंगे। पैसा लफंगा चीज है। क्योंकि यह हमेशा बदलता है।

जो अपनी बात पर कायम नहीं रहता है, उसी को हम लफंगा कहते हैं। यदि हम पैसे की कीमत मानेंगे, तो गिर जायेंगे। हमें श्रम - प्रतिष्ठा की योजना बनानी है। सर्वोदय - समाज ने एक योजना बनाई है, उसके अनुसार हरेक शख्स गांधी जी की स्मृति में एक गुन्डी सूत हर साल १२ फरवरी को अर्पण करेगा। कोई एक से ज्यादा गुंडी नहीं दे सकता है और सबसे सामान रूप से लिया जाता है। गांधी जी की स्मृति में हम श्रम की प्रतिष्ठा स्थापित करेंगे, तो देश में जागृति पैदा होगी और नव समाज रचना के व्रत की दीक्षा हम सबको देंगे। आज जो इक्कीस वर्ष के ऊपर के अट्ठारह करोड़ स्त्री-पुरुष हैं, उन्हीं को वोट देने का अधिकार है। पर हमारी सूत्रान्जलि के द्वारा बच्चा भी वोट दे सकता है। यह ध्यान में रखोगे, तो श्रम की प्रतिष्ठा कायम होगी, क्योंकि समाज-रचना का यही बुनियादी उसूल है।

दूसरी बात यह है कि हम इस वक्त भूल गये हैं कि हमें स्वदेशी धर्म का और व्रत का पालन करना है। स्वराज्य - प्राप्ति के पहले उसकी चर्चा चलती थी, लेकिन आज तो बाजार में असंख्य चीजें बाहर से आती हैं। हम विदेश की चीजों से द्वेष नहीं करते, पर हम दूसरों पर भार भी नहीं बनना चाहते। जो चीजें इस देश में बन सकती हैं, उनको यहीं बनाना चाहिये। यदि वे नहीं बन सकतीं तो उनके बिना कार्य चलना चाहिये। यदि हम ऐसा न करें, तो हमें लाचार होना पड़ेगा। इंगलैंड के लोग आज भी इस बात का ख्याल रखते हैं। यह तालीम उन्हें मिल चुकी है। उसका मतलब यह है कि अपने इर्द गिर्द जो चीजें हैं, उन्हीं से काम लेना चाहिये। इससे दूसरों पर भार नहीं पड़ता है। स्वदेशी धर्म का उच्चारण तो हमने पचास साल पहले से ही किया है। पर अब हम उसको भूल गये हैं। इसलिये अब उसे जाग्रत करना चाहते हैं। लेकिन सर्वोदय समाज ने तो और आगे का कदम

रखा है। उन्होंने एक प्रस्ताव किया है, जिसमें देहात के लोगों से कहा गया है कि खाना कपड़ा आदि अपनी आवश्यकताओं की चीजें देहात में बननी चाहिये, नहीं तो हम सच्चे स्वदेशी-धर्म का पालन नहीं कर सकते हैं। यह प्रस्ताव बहुत बड़े महत्व का है। हमारे पाच लाख देहातों को अगर जिन्दा रखना है, तो वहा वे कच्चे माल से पक्का माल वहीं बनना चाहिये। शहरवाले भी खाने और पहनने की, यन्त्र की बनी हुई नहीं, बल्कि हाथ की बनी हुई चीजें इस्तेमाल करें। इसका मतलब यन्त्रवाद के विरुद्ध प्रहार नहीं है। यन्त्र का भी एक स्थान है, लेकिन हिन्दुस्तान में जमीन कम है। प्रत्येक व्यक्ति पर आधी एकड़ जमीन है। उद्योग किये बिना, किसान पराधीन बनेगा। उसके लिए आजादी नाममात्र की रहेगी। इसलिए अपने अन्न वस्त्र के बारे मे देहात को स्वावलम्बी होना चाहिये, नहीं तो हिन्दुस्तान के लिए बड़ा भारी खतरा है। यह स्वच्छ शुद्ध स्वदेशी धर्म है। इस धर्म का पालन नहीं होगा, तो देहात उजड़ जायेंगे। इसलिए शहरवालों का यह कर्तव्य है कि परदेश के माल को रोकें। आज यह नहीं हो रहा है, बल्कि देहात से धन्धे उठ रहे हैं। आज देहात में तेल की, आटे की और दाल की मिलें खोली जा रही हैं। देहात में कपड़ा भी बाहर से आ रहा है और मन्त्री भी दाल के कारखाने खोलने के लिए जाते हैं। मुझे तो उन पर दया आती है। गाव के धन्धे छीने जायेंगे, तो परदेशी माल का शहर पर हमला होगा। इतना ही नहीं, बल्कि देहातियों का भी शहर पर हमला होगा। इससे हालत बहुत खराब हो जायेगी। समाज के एक तबके की हालत खराब है, तो दूसरे की अच्छी नहीं रह सकती है। क्योंकि समाज एक देह है। देह के एक अवयव मे दोष हो, तो उसका परिणाम सारी देह पर प्रभाव डालता है। यह शहर वालों के ही हित में है कि वे बड़े बड़े यान्त्रिक उद्योगों के जरिये

बनी हुई खाने और कपड़े की चीजें इस्तेमाल न करें। ग्रामोद्योग की चीजें इस्तेमाल करें। ग्रामोद्योग से सब को पूरा काम मिल सकता है। मैंने दिल्ली में प्लानिंग कमिशन के सामने भी यह बात रखी थी और उन्होंने भी यह मान लिया कि ग्रामोद्योग चाहिये। लेकिन वे रफ्तार बढ़ाना चाहते हैं। रफ्तार तो मैं भी बढ़ाना चाहता हूँ, लेकिन यदि एफिशियेन्सी के नाम पर, कुछ भी न किया जाय और सबको काम और खाना न मिले तो हम इसको बर्दाश्त नहीं कर सकते हैं। वे एफिशियेन्सी के नाम पर ग्रामोद्योग को नहीं बढ़ाते हैं। हमें स्वदेशी धर्म का व्यापक स्वरूप समझना चाहिये। उसका मतलब है देहातों को स्वावलम्बी बनाना।

जैसे हमने स्वराज्य प्राप्त किया, सबको वोटिंग का अधिकार दे दिया। अब जो भी सरकार बनती है, वह लोगों की प्रतिनिधि सरकार होती है। हम काम करने वालों को, सरकार के काम में जहां तक मदद दे सकते हैं देना चाहिये, और जो सरकार नहीं कर सकती है, वह हमें करना चाहिये। यदि हम भिखारी रहे, तो हमारी सरकार भी भिखारी बनेगी। सरकार की ताकत से हम ताकतवर नहीं बनेंगे, बल्कि हमारी ताकत से सरकार ताकतवर बनेगी। इसलिए सरकार जो भी काम नहीं कर सकती है, वह हमें करना चाहिये। सरकार की टीका नहीं करनी चाहिये। यह तो पालिटिक्स समझने की बात है। सबकी शक्तियों का संयोग करना ही सच्ची राजनीति है। आज अलग-अलग पक्ष बन गये हैं। अभी चुनाव भी होगया है। यह जो चुनाव लड़ने की बात कही जाती है, वह गलत है। चुनाव लड़ने की बात नहीं है, खेलने की बात है। चुनाव खेला करो और खेलने के बाद समझो कि जिसने जीता है, वह तो जीत ही गया है; लेकिन जो हारा है, वह भी जीत गया है। जिस तरह कुश्ती होती है, उसी तरह चुनाव खेलना चाहिये। ताली दोनों हाथों से बजती है। उसमें दोनों को दिल [illegible]

तरह चुनाव में दोनों ने हिस्सा लिए, लेकिन खत्म होने के बाद सब सफल हुए। जिस तरह खेलों में दोनों दल भाग लेते हैं और दोनों का समान महत्व रहता है, उसी तरह चुनाव में भी दोनों का समान महत्व होता है। लेकिन आज हमारे देश के सामने फूट की बड़ी भारी समस्या है। हमारा देश बड़ा होने पर भी फूट के कारण कमजोर बनता जा रहा है। बड़ों के लिए तो मेल होना चाहिये। दिल की एकता होनी चाहिये। जब बड़े बड़े मसले होते हैं, तब अलग अलग राय होती है। परन्तु इसके रहते हुए भी ऐसा काम ढूंढना चाहिये जिसमें सबका भला हो और उसमें ही सबको अपनी ताकत लगानी चाहिये। जिस तरह खेल खत्म होने के साथ हम प्रेम से हाथ मिलाते हैं, उसी तरह चुनाव के खेल के बाद हमें हाथ मिलाना चाहिये। एक बार जयप्रकाश नारायण पवनार आये थे। वहां हमने रहट चलाते चलाते प्रार्थना की थी। उस दिन जिस पहिये पर मेरा हाथ था, उसी पर उनका भी हाथ था। और हमने चक्र चलाया। उस समय मैंने कहा कि जिस तरह आज हमने इकट्ठा होकर चक्र चलाया है और प्रेम से रहे हैं, उसी तरह हमें समाज में रहना चाहिये। हम सब समाज के सामने अपने अपने दृष्टिकोण रखें और फिर वह जिसे चाहे उसे चुने। फिर भी हमें निरन्तर काम करते रहना चाहिये और जिस तरह आज हमने साथ साथ चक्र चलाकर बगीचे को पानी दिया, इसी तरह काम करते रहना चाहिये। इतना भाईचारा होना चाहिये कि प्यार कभी भी कम न हो और सबमें स्नेह बन्धन रहें तब यह चुनाव का मामला सधेगा। नहीं तो इस चुनाव से फूट पैदा होगी जो कि देश के लिए बड़ा भारी खतरा साबित होगा। हमारे समाज में यह माना गया है कि सारा कारबार अधिक से अधिक गावों में होना चाहिये। नब्बे फी सदी कारबार गांवों के हाथ रहना चाहिये। तालीम, रक्षा, उद्योग, सब कुछ गांवों में होने चाहिये। सिर्फ

दस फी सदी सत्ता केन्द्रों के हाथ में हो। गांवों का कारबार पंचायतों द्वारा होना चाहिये। हम मानते थे कि पंचों के मुख से परमेश्वर बोलता है। आज कल दुनिया में अल्प संख्या और बहुसंख्यावाद खड़े हुए हैं और यह सवाल दुनिया के हरेक देश में बड़ा भारी सवाल है। लेकिन ऐसे सवाल हिन्दुस्थान में पहले नहीं थे। क्यों कि नब्बे फीसदी कारबार गांवों के हाथों मे था।. और आज हम 'यह करेंगे,' तो गांव बच सकते हैं। नहीं तो हम चुनाव में गांवों में पार्टियां बनावेंगे जिससे फूट बढ़ेगी। आग लगाना आसान है, बुझाना कठिन है। कृष्ण भगवान गोकुल की लगी हुई आग खुद पी गये ऐसा किस्सा हम सुनते हैं। लेकिन ऐसा किस्सा हमेशा नहीं होता है। इसलिए यह मत-भेद हम चुनाव तक ही रखें। प्रजा में फूट नहीं होने दें। गांव में एक-रसता रखें। जहां अभेद है वहां भगवान अवतार लेते हैं, ऐसा कहा जाता है। भेद नष्ट हो, इसीलिए यह धर्म रूपी चक्र निर्मित हुआ है। भेद मिटाने वाला और सब को धारण करने वाला ही धार्मिक कहा जाता है। हरेक को अपने अपने अपने विचार लोगों के सामने रखने का पूरा अधिकार है, परन्तु एकता, एक-रसता कायम रखनी चाहिये। यदि हम इसको नहीं मानते तो हिन्दुस्थान की शक्ति बढ़ने वाली नहीं है बल्कि क्षीण होने वाली है। जब शक्तियां टकरा जाती हैं तो शक्ति कम हो जाती है। यदि एक पार्टी के पास दस पौंड शक्ति हो और दूसरे के पास आठ पौंड हो, तो दोनों की लड़ाई में कोई भी जीते, लेकिन देश की हार होती है। क्योंकि १० ऋण ८, याने देश को दो ही पौंड शक्ति मिलती है। सो दोनों के आपस में लड़ने से देश की हानि होती है, लेकिन दोनों के योग से १० धन ८, याने १८ पौण्ड शक्ति देश को मिलती है। इसीलिए सबकी ताकतों को मिलानी चाहिये, सबका योग करना चाहिये। इसी को सच्चा पालिटिक्स कहा जा सकता है।

गांधी जी ने यही काम किया, इसीलिए उनको राजनितिज्ञ कहा जाता है। परन्तु वे भी वह पूरी तरह से नहीं कर सके और आखिर देश में फूट पैदा हुई। लेकिन उन्होंने जितनी एकता लाई, उतनी और किसी ने नहीं लाई। राजनीति का मतलब है, प्रजा का बल बढ़े और भेद नष्ट हो। गांधीजी ने जाति, धर्म, भाषा, मालिक और मजदूर, देहातवाले और शहर वाले आदि सब भेदों को मिटाने की कोशिश की। उत्तर दक्षिण आदि भेद भी मिटाना चाहा। इस दृष्टि से उन्होंने ३० साल पहले ही राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार दक्षिण में किया। भेद के मौका को ध्यान में रखा और उन्हें मिटाने की कोशिश की। भेद मिटाने के लिए सब भेदोंपर एक साथ प्रहार किया। अलग अलग मिटानेकी कोशिश नहीं की। उन्हें काफी हद तक सफलता मिली, और देश को एक बनाने में सफल हुए। छोटे छोटे लोग आपस में लड़ते हैं तो दो के चार और चार के आठ टुकड़े बनते हैं। वे अक्ल वाले हैं, ऐसा आज माना जाता है। लेकिन यह मानना अक्ल न होने का लक्षण है। देश के सामने एक ऐसा कार्यक्रम रखना चाहिये जो सारे देश को एक कर सके। सब लोग भेद भूल कर उस काम में लग सकते हैं। ऐसा कार्यक्रम रखना पालिटिक्स का काम है। इससे देश की शक्ति बढ़ती है। "प्रजा शक्ति संवर्धनम् राज कारणम्।" लेकिन इस दृष्टि से हिटलर भी उत्तम नेता माना जायेगा, जिसने एक विचार पर लाखों करोड़ों को एक किया था। जो मन की शक्ति से सबको एक करेगा, वह ध्यान-योगी होगा। जो देश का सारा ध्यान और विचारशक्ति को एक मसले पर केन्द्रित कर सकता है, जो अनेक और अनन्त भेदों को मिटा सकता है, वही उत्तम राजनीतिज्ञ है। भू-दान यज्ञ एक ऐसा कार्यक्रम है जो सबको एक कर सकता है।

कानपुर
१४-५-५२